चन्दामामा
मार्च १९६९
75 P

Chandamama
Press
VADAPALANI
MADRAS-26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

जीवन यात्रा के
पथ पर शक्ति की
आवश्यकता है...

मार्च १९६९

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ०-७५ पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ९-००

कोलगेट से सांस की दुर्गंध रोकिये और दंत-क्षय का दिनभर प्रतिकार कीजिये !

क्यों कि : एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेंटल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंत-क्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक रोगाणुओं को दूर कर देता है।

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है, और कोलगेट-विधि से खाना खाने के तुरंत बाद दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का...अधिक दंत-क्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह बेमिसाल घटना है। केवल कोलगेट के पास यह प्रमाण है।

इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है—इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेंटल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं।

ज़्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज़्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...

दुनिया में अधिक लोगों को दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही पसंद है।

DC.G.38 HN

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form IV), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. *Place of Publication*	:	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
2. *Periodicity of Publication*	:	MONTHLY 1st of each calendar month
3. *Printer's Name* *Nationality* *Address*	:	B. V. REDDI INDIAN Prasad Process (Pvt) Ltd., 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
4. *Publisher's Name* *Nationality* *Address*	:	B. VISWANATHA REDDI INDIAN Managing Partner, Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
5. *Editor's Name* *Nationality* *Address*	:	CHAKRAPANI (A. V. Subba Rao) INDIAN 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
6. *Name & Address of individuals who own the paper*	:	SARADA BINDING WORKS: PARTNERS 1. Sri B. Viswanatha Reddi, 2. Sri B. L. N. Prasad, 3. Sri B. Venugopal Reddi, 4. Sri B. Venkatrama Reddy, 5. Smt. B. Seshamma, 6. Smt. B. Rajani Saraswathi, 7. Smt. A. Jayalakshmi, 8. Smt. K. Sarada.

I, B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1st March 1969

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
अपने प्रिय पाठकों को यह सूचित करते हमें प्रसन्नता हो रही है कि जनवरी १९६९ से हमने फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता का पुरस्कार १०) से बढ़ाकर बीस रुपये कर दिया है और साथ ही परिचयोक्तियों के हमारे कार्यालय में पहुँचने की अंतिम तारीख हर महिने की ७ के बदले १० तारीख निश्चित की है। आशा है, इससे सभी पाठक लाभ उठायेंगे। 'अगले अंक से हम 'कृष्णावतार' के बदले "महाभारत" धारावाही और गांधी-कहानी दे रहे हैं।
वर्ष: २० मार्च १९६९ अंक: ७

दयानिधि

राजशेखरपुर में रत्नाकर नामक एक व्यापारी था। विदेशों से जहाज़ों द्वारा व्यापार करके उसने करोड़ों रुपये कमाये। अतुल संपत्ति होने पर भी उसे दान देने की आदत न थी।

रत्नाकर की पत्नी गुणवती दयालु थी। गरीबों को देख उसका दिल पसीज उठता था। लेकिन उसका पति दान देना नहीं चाहता था। इसलिए वह गरीबों की मदद न कर पाती थी। दुखी हो जाती थी।

उनके एक लड़का था। उसका नाम दयानिधि था। वह अपनी माँ की तरह दयालु था। पिता की भांति अक्लमंद भी था। युवा होते ही उसकी माँ ने एक अच्छी कन्या के साथ उसका विवाह करना चाहा। लेकिन दयानिधि ने न माना।

इस पर रत्नाकर ने अपनी पत्नी गुणवती से कहा—"जब तक यह साबित न होगा कि दयानिधि धन कमाने की शक्ति रखता है, तब तक उसका विवाह नहीं होना चाहिये। अभी विवाह करने से वह विलासों में पड़ जायगा। उसके बाद व्यापार करने में उसका मन न लगेगा!"

रत्नाकर ने एक दिन दयानिधि को एक जहाज़ सौंप दिया। उसमें विविध प्रकार का माल भरकर व्यापार करने भेजा। दयानिधि अपने कर्मचारियों के साथ समुद्र पारकर एक बंदरगाह में पहुँचा। वहाँ पर डेरा डाल बैठ गया। वहाँ के व्यापारी उससे व्यापार की बातें करने आ पहुँचे। उसी वक़्त कई सिपाही अनेक क़ैदियों को उधर से ले जाते दयानिधि ने देखा। क़ैदियों के हाथों में हथकड़ियाँ और पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थीं। क़ैदी सब कड़ी धूप में पसीने से तर होकर चल रहे थे।

मोहनलाल

दयानिधि ने व्यापारियों से पूछा–"ये क़ैदी सब कौन हैं? चोर तो नहीं हैं न?"

"वे सब चोर नहीं, गरीब किसान हैं। राजा को कर चुका नहीं सके। इसलिए उनको क़ैदकर ले जा रहे हैं। वे कुल छे सौ आदमी हैं।" व्यापारियों ने कहा।

उनकी हालत देख दयानिधि का कलेजा पिघल गया। उसने अपना सारा माल उन व्यापारियों के हाथ बेच दिया। उस धन को लेकर सीधे राजा के पास जा पहुँचा। किसानों का कर चुकाकर उन छे सौ किसानों को क़ैद से छुड़वाया और बाक़ी रुपये लेकर घर लौटा।

दयानिधि के लाये हुए रुपये देख रत्नाकर ने पूछा–"सारा माल बेचने पर ये ही रुपये मिले? लागत में दसवाँ हिस्सा भी तो नहीं है? फ़ायदे की बात भगवान जाने!" दयानिधि ने क़ैदियों को छुड़ाने की सारी कहानी कह सुनायी।

"छी! तुम निरे बुद्धू हो! मेरे घर से अभी निकल जाओ।" रत्नाकर ने दयानिधि को डांट बतायी।

गुणवती ने रोते हुए अपने पति से बिनती की कि बेटे की यह गलती क्षमा करें। रत्नाकर नरम पड़ गया। उसने फिर एक जहाज़ पर माल भरवाकर दयानिधि को व्यापार करने भेजा।

इस बार दयानिधि की यात्रा के प्रारंभ में ही विघ्न आ पड़ा। दयानिधि का जहाज़ जिस बंदरगाह में था, उसी बंदरगाह में एक दूसरा भी जहाज़ था। उसमें कई औरतों और पुरुषों को चढ़ाया जा रहा था।

दयानिधि ने उस जहाज के लोगों से बातचीत की तो उसे मालूम हुआ कि रोनेवाले वे सब स्त्री-पुरुष गुलाम हैं। उनको दूसरे देशों में बेचकर जहाज़ के मालिक खूब लाभ पाते हैं। उसने जहाज़ के मालिकों के पास जाकर कहा–"मेरे जहाज़

का सारा माल लेकर इन सब गुलामों को छोड़ दीजिये!" जहाज़ के मालिकों ने उसकी शर्त को मान लिया।

जो गुलाम मुक्त हुए, उनका पता लगवाकर दयानिधि ने उन सबको अपने अपने गाँव भेज दिया। गुलामों में अब केवल दो औरतें बची थीं। एक जवान औरत थी और दूसरी बूढ़ी थी। "तुम लोग कौन हो? कहाँ के रहनेवाली हो?" दयानिधि ने उन औरतों से पूछा।

जवान औरत ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने सर झुका लिया। बूढ़ी ने कहा–"मैं इनकी दासी हूं!"

"यह कौन है?" दयानिधि ने फिर पूछा। पर बूढ़ी ने इस सवाल का कोई जवाब नहीं दिया। "तुमको कहाँ पर भेजना है?" दयानिधि ने फिर पूछा।

"हमें कहीं जाना नहीं है।" बूढ़ी ने उत्तर दिया। लाचार होकर दयानिधि उन दो औरतों को अपने ही घर ले गया और सारा समाचार कह सुनाया।

रत्नाकर ने अब निश्चय कर लिया कि उसका पुत्र किसी काम का नहीं है। वह भ्रम में पड़ गया है। उसके लड़के को न व्यापार करना आता है और न उसमें लाभ कमाना ही। किसी गुलाम औरत की ख़ूबसूरती देख उस पर मोहित हो सारा माल बेचकर घर लौट आया। उसने यही सोचा कि बेटे की वह शादी करता तो तब भी यही बात होती। इस पर बिना रहम खाये अपने लड़के को घर से निकाल दिया। इस बार गुणवती भी अपने पति के विरुद्ध कुछ बोल नहीं पायी।

घर से निकाले गये दयानिधि पर रहम खाकर उसके दोस्तों ने उसकी मदद की। उसके रहने के लिए एक घर का इंतज़ाम किया और व्यापार करने के लिए रुपये भी दिये। उन दो औरतों के साथ उस

घर में रहते हुए दयानिधि ने मित्रों की मदद से छोटे-छोटे व्यापार करना शुरू किया। उन व्यापारों में उसे लाभ होता रहा। साल-भर पूरा होने के पहले दयानिधि ने अपने दोस्तों के रुपये चुका दिये। व्यापार में जो लाभ हुआ उसमें थोड़ा हिस्सा दान करने अलग किया। बाक़ी रुपयों से अपने दिन काटने लगा। उसका व्यापार दिन ब दिन बढ़ता गया।

दयानिधि के घर में रहनेवाली जवान औरत विजयपुर की राजकुमारी थी। बूढ़ी औरत राजकुमारी की दासी थी। उन दोनों को चोरों ने उठा ले जाकर गुलाम ख़रीदनेवाले व्यापारियों के हाथ बेच दिया। राजकुमारी शर्म के मारे यह नहीं कह पायी कि वह अमुक देश की राजकुमारी है। उसका यह भी विचार था कि गुलाम के रूप में उसका बिक जाना अपने पिता के लिए अपमान और उसके वंश के लिए कलंक की भी बात है। उसने सोचा था कि दयानिधि ने अन्य गुलामों के साथ उसे भी खरीद लिया है। लेकिन धीरे धीरे उसके प्रति राजकुमारी के मन में आदर बढ़ने लग गया था। इसलिए उसने निश्चय किया कि ज़िंदगी भर वह उसी की छाया में रहकर अज्ञातवास करेगी।

परंतु इस बीच में विजयपुर का राजा चुप बैठा नहीं रहा। जब से उसकी बेटी गायब हो गयी तब से वह अपने गुप्तचरों को भेजकर देश-विदेशों में राजकुमारी को ढुंढ़वाता रहा। ढूंढ़ते-ढूंढ़ते कुछ गुप्तचर राजशेखरपुर भी आ पहुंचे। उनको मालूम हुआ कि उस नगर के रत्नाकर नामक करोड़पति के पुत्र दयानिधि ने सैकड़ों गुलामों को छुड़ाया है और उनमें दो औरतें अब भी उसके पास ही रहती हैं। वे दयानिधि का घर ढूंढ़ते

हुए वहाँ पहुँचे और राजकुमारी तथा दासी को पहचान लिया।

राजकुमारी ने उन गुप्तचरों के साथ अपने पिता के पास जाने से इनकार किया—"यहाँ पर हम सुखी हैं। आज नहीं तो कल मुझे पराये घर में जाना ही होगा। मेरे कारण मेरे पिताजी को अपयश क्यों प्राप्त हो? उनसे कहिये कि मैं यहाँ पर सुख से रहती हूँ।" राजकुमारी ने गुप्तचरों से कहा।

यह समाचार मिलते ही विजयपुर का राजा धूमधाम से आ पहुँचा। राजा ने अपनी पुत्री से बात की, फिर दयानिधि से कहा—"यह मेरी पुत्री है। मैं इसे अपने साथ ले जाता हूँ।"

"मुझे आज बड़ी प्रसन्नता हो रही है। मैं इसको एक साल पूर्व ही भेज देता। लेकिन इसने मुझ से कोई विवरण नहीं बताया। बेचारी राजमहल के सुखों से वंचित रहकर इस गरीब के घर पर तकलीफ़ें उठाती रहीं। मुझे इस बात का बड़ा दुख है।" दयानिधि ने राजा को समझाया।

"लेकिन मेरी बेटी मेरे साथ जाने में इनकार कर रही है। उसे यही घर पसंद है। यदि तुमको आपत्ति न हो तो मैं तुम्हारे साथ अपनी बेटी का विवाह करना चाहूँगा।" विजयपुर के राजा ने कहा।

दयानिधि चकित रह गया। वह कुछ जवाब नहीं दे पाया।

इस पर राजा हँस पड़ा और बोला—"बावरे, राजकुमारी तुमसे प्यार करती है! यह बात भी तुम समझ नहीं पाये?" राजा ने दयानिधि के पिता को समझाकर अपनी पुत्री का विवाह राजशेखरपुर में बड़े वैभव के साथ किया। पुत्री और दामाद को अनेक प्रकार के उपहार देकर अपने राज्य को लौट गया।

भेड़ियों का धँसान

मंदरगिरि के राजा मंदरवर्मा का यह विश्वास था कि वह बड़ी सामर्थ्य के साथ शासन करता है, इसलिए प्रजा ज्ञानी और विवेक बन गयी है। इसलिए उन्हें शांति के साथ सुख भी प्राप्त हो रहा है। यह बात अकसर राजा अपने मंत्रियों से कहा करता था। यह बात सुन-सुनकर प्रधान मंत्री के कान पक गये। एक दिन उसने कहा–"महाराज, आप क्षमा कीजिये। आप जो सोचते हैं, वह ठीक नहीं है। प्रजा में ज्ञान और विवेक के होने से देश में शांति और सुख नहीं हैं। राज्य का भार संभालने वाले हम लोगों का चरित्र जब तक अच्छा होगा तब तक प्रजा भी हमारा अनुकरण करेगी। जिस दिन हम ग़लत रास्ते पर क़दम रखेंगे उस दिन प्रजा भी उसी रास्ते पर क़दम बढ़ायगी। यह सब भेड़ियों का धँसान है।"

अपनी बात का खण्डन करने तथा जनता को भेड़िया धँसान बताने पर राजा को मंत्री पर क्रोध आया। "यह साबित करो कि प्रजा का व्यवहार भेड़िया धँसान है। मैं तुमको छे महीने का समय देता हूँ। इस अवधि के अन्दर तुम साबित न करोगे तो तुम्हारा सर काटा जायगा।" राजा ने कहा।

राजा की धमकी सुनकर मंत्री ज़रा भी विचलित नहीं हुआ। वह राजमहल से सीधे जेलखाने में गया। वहाँ पर यह पता लगाया कि दूसरे दिन जेल से कौन छूटने वाला है। उस क़ैदी से एकांत में बात करके मंत्री निश्चित हो घर चला गया।

दस साल कारागर में बिताया हुआ वह क़ैदी दूसरे दिन मुँह अंधेरे जेल से छूट गया। तुरंत वह सन्यासी का वेश धरकर राजमहल से थोड़ी दूर पर एक पेड़ के नीचे आँख बंद कर पद्मासन लगाये बैठ

गया। सूरज के निकलने पर मंत्री नगर का पर्यवेक्षण करने के बहाने कुछ भटों को साथ लेकर उधर से आ निकला और उसने सन्यासी के चरणों में प्रणाम किया।

उस रास्ते से गुजरनेवाली प्रजा ने यह सब देख सन्यासी को प्रणाम करके भेंटें भी चढ़ायी और वहाँ से चलते आपस में कहने लगी—"मंत्री ने ही उनके चरण छुये तो वे कोई बड़े महात्मा होंगे।"

सन्यासी का समाचार और मंत्री की भक्ति की बातें सारे नगर में फ़ैल गयीं। नगर में से प्रजा भीड़ बांध कर सन्यासी को देखने आने लगी। लोगों का भेंट चढ़ाना भी अधिक हो गया। यह बात राजा के कानों में भी पड़ गयी। राजा ने मंत्री से पूछा—"क्या तुमने सुना कि हमारे नगर में कोई महात्मा पधारे हैं?"

"जी हाँ, सरकार! मैंने उनके दर्शन भी किये हैं। उनके मुखमण्डल पर ब्रह्मतेज टपक रहा है।" मंत्री ने जवाब दिया।

"तब तो हम भी एक बार उनके दर्शन करेंगे।" इसके बाद सदल-बल राजा अपने परिवार सहित सन्यासी के पास पहुँचा और उनके दर्शन करके प्रणाम भी किया।

इसके बाद सन्यासी को देखनेवालों की भीड़ लग गयी। देश के कोने-कोने से लोग तीर्थ यात्रा की भांति आने लगे। सन्यासी के चारों ओर कुछ भक्त ब्राह्मण जा पहुँचे और लोगों पर नियंत्रण करने लगे।

एक सप्ताह बीत गया। एक दिन मंत्री ने गुप्त रूप से राजा से कहा—"महाराज, भूल हो गयी। पेड़ के नीचे जो सन्यासी बैठा था, वह कहीं भाग गया है। जाँच करने पर मुझे पता चला कि वह और कोई नहीं, हमारे कारागार में दस साल तक सज़ा पाया हुआ क़ैदी है।"

इसके बाद राजा ने फिर कभी मंत्री से 'भेड़िया धँसान' की चर्चा नहीं की।

शिथिलालय

[१४]

[शेर के पिंजड़े के पास ताक में बैठकर शिखिमुखी ने गोंड-भूतों के नेता को पकड़ लिया। इस बीच गोंड लोग नागमल्ली को गगन-गुफा में ले गये। भूतों के नेता ने जान बचाने के भय से शिखिमुखी को गगन-गुफा के पास मदद देने का वादा किया। शेर के पिंजड़े को रस्सों की मदद से शबर खींचकर ले जाने लगे। बाद—]

शिखिमुखी और विक्रमकेसरी के पीछे चलनेवाले शबर और सवरों ने शेर के पिंजड़े के निकट आते ही उसे घेर लिया। उनमें से एक-दो आदमियों ने भालों से शेर को डराना चाहा, इस पर शेर उत्तेजित हो पंजे बाहर निकाल कर दहाड़ने लगा। शिखिमुखी ने उनको रोककर एक बार उसकी ओर ध्यान से देखा, तब अपने कंधे पर पड़े शेर के चमड़े को उसकी ओर हिलाया। झट शेर पिंजड़े के एक कोने में जाकर घूरते हुए पिछली टांगों के बल बैठ गया।

"शेर को डरानेवाले इस चमड़े से हम बड़े-बड़े काम कर सकते हैं। मेरा संदेह है कि गोंड के नेता ने इसमें कोई मंत्र डाल रखा है।" शिखिमुखी ने हँसते हुए कहा।

विक्रमकेसरी ने शिखिमुखी के हाथ के शेर के चमड़े व कपाल का एक बार स्पर्श

करके अपने चेहरे पर पीड़ा दिखाते हुए कहा–"इनको छूते ही लगता है, मानों आग को छू लिया है। भूतों का नेता भी पुजारी जैसा मंत्र-तंत्र जाननेवाला मालूम होता है।" उसकी बातों पर वहाँ पर इकट्ठे सभी शबर व सवर हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये।

इसके बाद सब जंगली रास्ते से थोड़ी दूर जाकर, घाटी की पगडंडी से होकर पहाड़ पर स्थित गुफा की ओर बढ़ने लगे। शेर के पिंजड़े को उस टीले पर चढ़ाना शिखिमुखी के अनुचरों को कुछ कठिन मालूम होने लगा। लेकिन वे इस उत्साह से पिंजड़े को ऊपर खींचते जाने लगे कि उसके नेता का लड़का उस पिंजड़े के ज़रिये कोई हिम्मत का काम करने जा रहा है। शेर बड़ी देर तक दहाड़ता रहा, फिर थककर, पिंजड़े के एक कोने में दुबककर बैठ गया।

गगन-गुफा के निकट पहुँचते ही शिखिमुखी और विक्रमकेसरी ने अपने अनुचरों को दो भागों में बांट दिया। एक दल उस पहाड़ी रास्ते में घाटी से गोंडों को भागते रोकेगा और दूसरा दल गोंड़ों की बस्ती की कंटीली झाड़ी के पास रहकर, मौक़ा पाकर बस्ती पर या तो हमला कर बैठेगा, या वहीं पर रहकर बाहर आनेवाले गोंड़ों को डरा व धमकायगा। शिखिमुखी ने सबको सावधान किया कि नागमल्ली के उसके अधीन होने तक जहाँ तक हो सके, लड़ाई छेड़े बिना काम निकालना चाहिए। इसके बाद शेर का पिंजड़ा कंटीली झाड़ी के निकट रखा गया।

गोंड़ों की बस्ती में कुल मिलाकर चालीस-पचास झोंपड़ियों से ज़्यादा न होंगी। उनके चारों तरफ़ पाँच-छे फुट ऊँची झाड़ी मजबूत लाठियों से निर्मित है। झाड़ी के उस पार जहाँ-तहाँ ऊँचे-ऊँचे

पेड़ है। उसकी डालें झाड़ी पर झुकी हुई हैं जिससे बस्ती में उतरकर जाने में बड़ी सहूलियत है। शिखिमुखी और विक्रमकेसरी एक ऊँचे पेड़ पर चढ़कर यह देखने लगे कि बस्ती में जो कोलाहल हो रहा है, उसका क्या कारण है।

गोंडों का सरदार मामूली झोंपड़ी में नहीं रहता, उसका पूरा परिवार एक बहुत बड़ी पहाड़ी गुफा में रहता है। उस गुफा के ऊपर और अगल-बगल में चूना पोतकर, रंग-बिरंगे चित्रों से सजाया गया है। उस गुफा के सामने खाली मैदान में बड़े-बड़े अलाव जल रहे हैं। उनके चारों तरफ़ गोंडों के स्त्री-पुरुष इकट्ठे हो गाते-नाच रहे हैं। एक ऊँचे लक्कड पर बैठे पुजारी यह सब दृश्य देख रहा है। गोंडों का सरदार थोड़ी दूर पर खड़े हो भूतों के नेता से बात कर रहा है।

"शिखी, यही गगन-गुफा है? नाम तो बड़ा है। लेकिन ये सब अब क्या कर रहे हैं?" विक्रमकेसरी ने शिखिमुखी से पूछा।

"कोई जलसा मना रहे हैं। मैंने सोचा था कि हमारे पहुँचते-पहुँचते यहाँ पर सन्नाटा छाया रहेगा। मेरी सारी योजना मिट्टी में मिल गयी। मैं इस बीच देख आता हूँ कि भूतों के नेता ने जहाँ पर नागमल्ली को रखने की बात कही थी, वहाँ पर रखा है या नहीं!" यह कहकर शिखी पेड़ से उतरा और बाड़ी के फाटक की ओर चला।

बाड़ी का फाटक बंद था। मगर शिखी ने ज्यों ही दोनों हाथों से उसे ढकेला, वह थोड़ा खुल गया। वह भीतर घुस पड़ा। वहाँ से थोड़ी दूर पर एक छोटी-सी झोंपड़ी थी। भीतर कोई रोशनी न थी और न उसके सामने कोई पहरेदार ही था। शिखिमुखी ने सोचा कि

हुआ कि गोंड़ों ने उन रस्सों का प्रयोग नागमल्ली को बांधने के काम में किया होगा। इसका मतलब है कि नागमल्ली को उन लोगों ने कुछ समय तक यहाँ पर बांध रखा था। तब तो अब उसे कहाँ ले गये होंगे? उसे जैसे वचन दिया गया था, वैसे भूतों के नेता ने बाड़ी के नज़दीक वाली झोंपड़ी में नागमल्ली को रखा होगा। फिर किस वज़ह से उसे दूसरी जगह ले गया।

शिखिमुखी ने सोचा कि इस तरह सोचते वक़्त बेकार करना खतरे से खाली नहीं; यह सोचकर वह फिर विक्रमकेसरी के पास लौट आया और सारी बातें उसे समझाकर बोला—"हमको या तो भूतों के नेता ने धोखा दिया या नहीं तो किसी और ने उसे दगा दिया।"

"तब तो हम सब एक साथ बाड़ी पारकर गोंडों का खातमा करेंगे और नागमल्ली को जिस झोंपड़ी में छिपाया है, उसका पता लगायेंगे।" विक्रमकेसरी ने कहा।

शिखिमुखी ने पल-भर सोचकर कहा—"विक्रम! तुम्हारा कहना सही है, पर मुझे लगता है कि गोंडों को वश में कर

भूतों का नेता अपने वादे के मुताबिक़ नागमल्ली को वहीं पर रखा होगा। यह सोचकर बड़े चौकन्ने हो वह उस झोंपड़ी के दर्वाज़े पर पहुँचा। वहाँ पर लगी टट्टी को हटाकर भीतर झांका, लेकिन किसी की आहट न होते देख वह भीतर चला गया।

झोंपड़ी में कोई न था। अंधेरा फैला था। शिखिमुखी ने चकमक पत्थर जलाकर रूई जलायी और उस रोशनी में सारी झोंपड़ी को ढूंढा। झोंपड़ी के एक कोने में उसे दो-तीन फुट लंबे रस्से दिखायी दिये। उनको ध्यान से देखने पर उसे संदेह

लेना उतना सरल नहीं है। वे लोग गिनती में हमसे ज्यादा ही होंगे। उल्टे हम लोग उन पर हमला कर बैठे, तो उनमें कुछ लोग नागमल्ली को कहीं उठा ले जाकर छिपा सकते हैं। मैंने इसके पहले ही एक योजना बना रखी है।" यह कहते शिखी ने विक्रम को शेर का चमड़ा व कपाल दिखाया।

"क्या करने जा रहे हो? वह कैसी योजना है?" विक्रमकेसरी ने पूछा।

"हमें पहले इस बाड़ी में से ऐसा रास्ता बनाकर तैयार रखना होगा, जिसमें से पिंजड़े का शेर ऐन वक़्त पर हमारे छोड़ते ही बस्ती में जा सके। इसी बीच मैं बस्ती में जाकर पता लगाऊँगा कि नागमल्ली को उन लोगों ने कहाँ पर छिपा रखा है? अगर हमारे हाथ एक गोंड आ गया तो उसके जरिये हम सारे रहस्य का पता लगा सकते हैं।" शिखी ने कहा।

"तुम्हारा अकेला जाना शायद खतरनाक हो सकता है।" विक्रमकेसरी ने शंका प्रकट की।

"वैसे डर की कोई बात नहीं। शेर का चमड़ा और कपाल जो हैं! तुम ही

देखोगे, क्या होनेवाला है? इस बीच तुम शेर के पिंजड़े के पास की बाड़ी कटवाकर, शेर को गोंडों पर छोड़ने लायक़ तैयारी करो। मैं जब कपाल गोंडों पर फेंक दूँगा, वही तुम्हारे लिए संकेत है।" शिखिमुखी ने समझाया।

विक्रमकेसरी ने अपने अनुचरों के पास जाकर शेरवाले पिंजड़े के सामने की लकड़ियोंवाली बाड़ी नीचे से तीन-चार फुट तक चुपचाप कटवा दी। शिखिमुखी डालों पर से नीचे उतरकर अंधेरे में छिपते हुए झोंपड़ियों की ओर बढ़ने लगा। अचानक उसे उस झोंपड़ी के पास एक

गोंड़ छोटा-सा मशाल लिये आते दीख पड़ा, जिसे वह खोजकर लौटा था।

मशालवाला गोंड़ झोंपड़ी के दर्वाजे को धीरे से हटाकर भीतर चला गया। मौक़ा पाकर शिखी झोंपड़ी के आगे पहुँचा और दर्वाज़े की आड़ में खड़ा हो गया। गोंड़ सारी झोंपड़ी ढूँढ़कर आश्चर्य चकित हो आँखें बड़ी करके मन ही मन गुनगुनाने लगा। शिखी को संदेह हो गया कि वह नागमल्ली की खोज़ में ही उस झोंपड़ी में आया है। झट वह बिल्ली की भांति चुपचाप झोंपड़ी के अंदर पहुँचा, पीछे से छलांग मारकर उसका गला दबा बैठा। दायें हाथ से उसका मुँह बंदकर हाँफते हुए बोला–"जान बचाना हो तो चिल्लाओ मत!"

गोंड़ के हाथ का मशाल नीचे गिर पड़ा। गोंड़ छुड़ाने की कोशिश किये बिना तनकर खड़ा रह गया। शिखी ने उसका गला ढीला करते हुए पूछा–"तुम यहाँ क्यों आये हो?"

गोंड़ ने भयभीत नेत्रों से शिखी की ओर ऐसा देखा, मानों किसी भूत को देख लिया हो! फिर काँपते हुए बोला–"मेरे सरदार ने सबर नागमल्ली को लाने मुझे भेजा है। इसीलिए आया हूँ।"

"नागमल्ली को यहाँ छिपा रखा है, यह बात तुम्हारे सरदार को किसने बतायी?" शिखी ने पूछा।

"भूतों के सरदार ने।" गोंड़ ने जवाब दिया।

"तो फिर नागमल्ली कहाँ पर है? सच बताओ, नहीं तो मार डालूँगा।" यह कहते शिखिमुखी ने कमर पर लटकनेवाली कटार ऊपर उठायी।

"मुझे न मारो, साहब! मैं गोंड़ों के सरदार का आदमी नहीं हूँ। भूतों के सरदार का ख़ास नौकर हूँ। उन्होंने मेरे

ज़रिये नागमल्ली को यहाँ पर छिपवा रखा था और कहा था कि बाड़ी का फाटक खोलकर रख दूं। मैंने वैसा ही किया था।" गोंड़ ने जवाब दिया।

"तुम जानते हो कि भूतों के सरदार ने ऐसा क्यों किया?" शिखी ने पूछा।

"अच्छी तरह तो नहीं जानता हूँ। लेकिन कहा था कि उसे आकाश देवता की पुजारिणी बनाने जा रहा है। यह बात किसी से न कहने को बताया है। मैं सच-सच बता रहा हूँ। मुझे न मारो, साहब!" यह कहते गोंड शिखिमुखीके पैरों पर गिरने लगा।

शिखिमुखी ने उसे रोकते हुए सचेत किया-"तब तो चले जाओ! यह बात किसी से तुम न कहो कि तुमने मुझे देख लिया है! खबरदार!"

गोंड चला गया। शिखिमुखी शेर का चमड़ा ओढ़े हाथ और पैरों के बल गगन-गुफा के पास की झोंपड़ियों की ओर चला। इतने में गोंडों के सरदार के प्रदेश पर हो-हल्ला मचा। शिखी अंधेरे की आड़ में छिपते उस ओर बढ़ा तो उसे भूतों का सरदार और शिथिलायय के पुजारी आपस में झगड़ते से सुनाई पड़ा। उन दोनों के पास खड़े गोंडों

का नेता चिल्ला रहा था–"धोखा है, दगा है!"

इस झगड़े का कारण जानने के ख्याल से शिखिमुखी थोड़ा और आगे बढ़ा, तब उस पर अलावों की रोशनी पड़ी। झट एक-दो गोंड चिल्ला उठे–"शेर है! शेर! भागो!"

गोंड़ों का नेता, भूतों का सरदार और पुजारी तुरंत गगन-गुफा की ओर दौड़ पड़े। उनको भाले से मारने के आवेश में शिखिमुखी उठ खड़ा हुआ जिससे शेर का चमड़ा खिसककर नीचे गिर गया। भागनेवाले गोंड रुककर चिल्ला पड़े–"शेर नहीं, आदमी है।" यह कहते वे सब शिखिमुखी की ओर आगे बढ़े।

शिखिमुखी एक-एक क़दम पीछे हटाते भाला उठाये बाड़ी की ओर निकला। गोंड़ों की चिल्लाहट सुनकर उनका नेता फिर अलावों के पास दौड़ आया। शिथिलालय का पुजारी क्रोध में आकर दांत पीसते बोला–"मैं जानता हूँ कि वह शेर-वेषधारी कौन है! उसे जान से पकड़ो। संभव नहीं तो काट डालो।" पुजारी हुंकारकर उठा।

गोंड लोग भाले उठाये शिखिमुखी की ओर आने लगे। खतरे की संभावना देख शिखिमुखी ने पुजारी पर कपाल फेंक दिया और ज़ोर से चिल्ला उठा। दूसरे ही क्षण विक्रमकेसरी ने पिंजड़े में से शेर को छोड़ दिया। वह दहाड़ मारते शिथिलालय के पुजारी और बाक़ी लोगों की दिशा की ओर कूद पड़ा।

"भागो मत! एक दूसरा शेर-वेषधारी है! मारो, काटो।" कहते शिथिलालय का पुजारी चिल्ला पड़ा। शेर ने उन दो गोंड़ों को पंजे को मार गिराया जो उसके सामने आये; तब वह पुजारी की ओर उछलते-कूदते आगे बढ़ा। (और हैं)

पराजय

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल, सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल यों कहने लगा :

"राजन, मैं आपकी शक्ति और सामर्थ्य पर संदेह नहीं कर रहा हूँ। विजय और पराजय के आधार पर शक्ति और सामर्थ्य का निर्णय करना संभव नहीं। इसके प्रमाण स्वरूप मैं तुमको वैशाली की राजकुमारी कुवलयेश्वरी की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो :

वैशाली के राजा के बहुत समय बाद एक पुत्री हुई। पुत्री को ही पुत्र मान कर राजा ने अपने अनंतर उसे शासन का भार सौंपने के विचार से उसका नामकरण कुवलयेश्वरी किया और बचपन से ही उसे युद्ध-विद्याएँ सिखायीं। एक ओर

वेताल कथाएँ
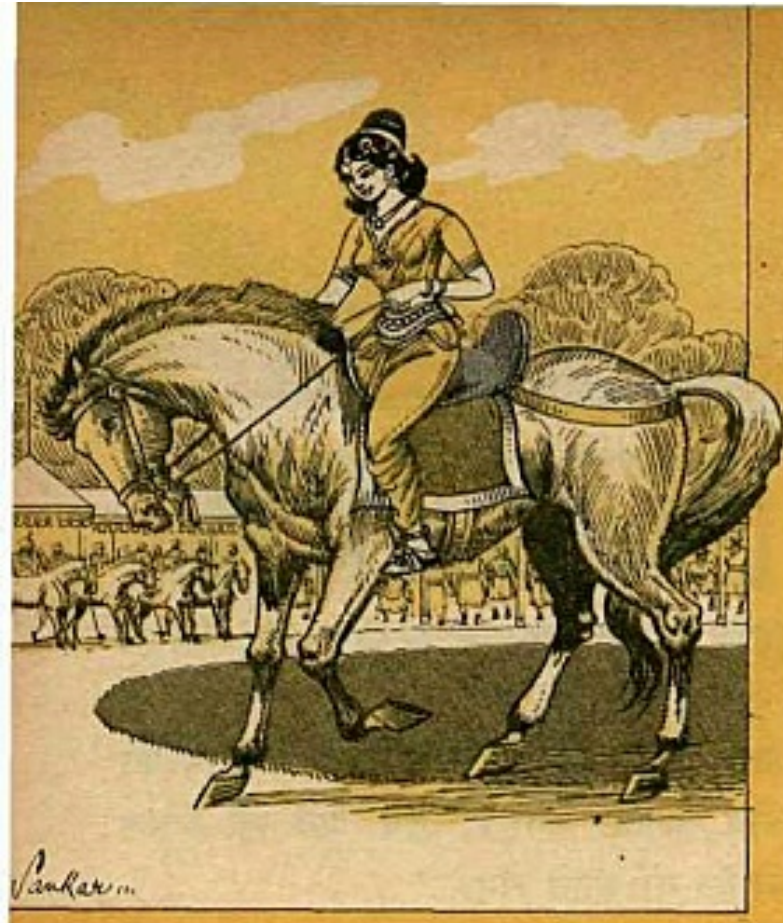
राजकुमारी ने घुड़सवारी, धनुर्विद्या, तलवार चलाना इत्यादि विद्याएँ सीखते हुये, दूसरी ओर शासन-विधान, मंत्रणा करना, नीति शास्त्र आदि का अभ्यास किया!

कुवलयेश्वरी के युक्त वयस्का होते ही राजा ने उसके विवाह करने का संकल्प किया। तब कुवलयेश्वरी ने अपने पिता से बताया कि जो व्यक्ति युद्ध-विद्या आदि में उसे पराजित करेगा, उसी के साथ वह विवाह करेगी। राजा ने इस शर्त को स्वीकार किया और स्वयंवर का उचित प्रबंध किया। समस्त राजकुमारों को राजा ने निमंत्रण पत्र भेजें।

स्वयंवर में भाग लेने अनेक राजकुमार आये। उनमें अधिकांश लोग राजकुमारी के साथ लड़ने के लिए तैयार होकर ही आये। सब के सामने राजकुमारी ने अपनी सारी शक्तियों का प्रदर्शन किया। जंगली घोड़ों पर, काबू करके उन पर सवार किया। अपनी धनुर्विद्या का अनेक ढंग से प्रदर्शन किया। राजकुमारी की भांति जो राजकुमार सभी प्रदर्शनों में अपनी सामर्थ्य को साबित करेगा, उसे अंतिम परीक्षा के रूप में तलवार की लड़ाई में पराजित करना होगा। जो उसे पराजित करेगा, उसके साथ वह विवाह करेगी।

कुछ राजकुमार जंगली घोड़ों पर क़ाबू नहीं कर सके। कुछ और राजकुमार धनुर्विद्या में शब्द-भेदी और मत्स्य-यंत्र को तोड़ने में पराजित हो गये। एक दो राजकुमार सभी विद्याओं में अपनी प्रवीणता दिखाकर तलवार की लड़ाई में कुवलयेश्वरी के हाथों में पराजित हो गये।

लेकिन मंगलपुर के राजकुमार राजशेखर ने समस्त विद्याओं में राजकुमारी के बराबर अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया और तलवार की लड़ाई में भी राजकुमारी के हाथ से उसकी तलवार को उड़ा दिया।

कुवलयेश्वरी हारकर सर झुका कर खड़ी हो गयी। सबने हर्षनाद किये। इस स्पर्धा में विजयी राजकुमार युवक और रूपवान था। इसलिए राजा भी बहुत प्रसन्न हुआ। उसने राजकुमारी कुवलयेश्वरी से कहा—"बेटी, उस राजकुमार के गले में बरमाला डाल दो।"

इस पर राजशेखर ने राजकुमारी को रोकते हुये कहा—"ठहरो! अब तक इन स्पर्धाओं में भाग न लेनेवाले राजा बहुत हैं। उन में से अगर कोई मुझे तलवार की लड़ाई में हरा सके तो मेरी यह विजय झूठी साबित होगी। इसलिए जो इच्छा रखते हैं, वे मेरे साथ तलवार की लड़ाई के लिए आगे आ जाओ!"

उसके साथ तलवार-युद्ध करने दो तीन युवक आगे आये और उसके हाथ में हार गये। इतने में अंधेरा फैल गया। उस दिन का कार्यक्रम दूसरे दिन के लिए स्थगित करके सब अपने अपने डेरे में चले गये। दूसरे दिन सुबह राजशेखर ने तलवार की लड़ाई के लिए बचे हुए लोगों को निमंत्रित किया, तब तेजवर्मा नामक एक राजकुमार आगे आया।

दोनों ने तलवार-युद्ध किया। थोड़ी ही देर में राजशेखर तेजवर्मा के हाथों में

पराजित हो गया। प्रेक्षकों ने हर्षनाद किये। राजशेखर की शर्त के अनुसार उसे पराजित करनेवाला राजकुमारी कुवलयेश्वरी के साथ विवाह कर सकता था।

राजा ने अपनी पुत्री को तेजवर्मा के गले में वरमाला डालने का आदेश दिया।

परंतु तेजवर्मा ने राजा को रोकते हुए कहा–"नियमानुसार तलवार की लड़ाई में जो राजकुमारी को पराजित करेगा, वही राजकुमारी के साथ विवाह कर सकता है। मैंने राजकुमारी को नहीं हराया है। इसलिए मेरा उसके साथ विवाह करना नियम के विरुद्ध होगा।" तेजवर्मा के इस आक्षेप पर राजा खीझ उठा और बोला–"तब तो तुम राजकुमारी के साथ ही युद्ध करो।"

तेजवर्मा और कुवलयेश्वरी ने तलवार की लड़ाई लड़ी। उसमें तेजवर्मा हार गया। इसलिए राजा ने राजशेखर को ही विजयी घोषित कर राजकुमारी के द्वारा उसके गले में वरमाला डलवा दी और वैभव के साथ उन दोनों का विवाह किया।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा–"राजन, इस कहानी की कुछ बातें मेरी समझ में नहीं आतीं। राजकुमारी को तलवार की लड़ाई में पराजित कर उसके

साथ विवाह करने से राजशेखर तृप्त नहीं हुआ, बल्कि उसने बचे हुये लोगों को तलवार की लड़ाई के लिए क्यों ललकारा? और उसे पराजित करनेवाले तेजवर्मा ने भी राजकुमारी से विवाह नहीं किया, बल्कि उसने भी राजकुमारी के साथ तलवार का युद्ध क्यों किया? युद्ध करके भी वह क्यों हार गया? राजशेखर, तेजवर्मा और राजकुमारी ने भी तलवार की लड़ाई में एक दूसरे को हराया, ऐसी हालत में सचमुच उनमें कौन श्रेष्ठ है? इन संदेहों का समाधान न बताओगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमादित्य ने यों जवाब दिया-"ये सब तलवार-युद्ध देखने में नक़ली मालूम होते हैं। राजशेखर सुन्दर है। इसलिए राजकुमारी जानबूझकर उसके हाथ में हार गयी। परंतु राजशेखर राजकुमारी से शादी करना नहीं चाहता था। इसलिए दूसरों के हाथ पराजित होने के ख्याल से ही उसने और लोगों को निमंत्रित किया। एक-दो सामने भी आये, लेकिन उन लोगों ने उसे हारने का मौक़ा नहीं दिया। तेजवर्मा ने असावधान रह कर राजशेखर को हारने दिया। जीतने के बाद उसे यह डर सताने लगा कि उसे राजकुमारी के साथ विवाह करना पड़ेगा। इसलिए उसने राजकुमारी के साथ तलवार-युद्ध करने का मौक़ा ढूंढा। वह जानता था कि इसके पूर्व ही राजकुमारी राजशेखर को वर चुकी है, इसलिए वह तेजवर्मा के हाथ में नहीं हारेगी। इसीलिए वह राजकुमारी के हाथों में आसानी से हार गया। इस गड़बड़ का मूलकारण राजकुमारी की अदूरदर्शिता ही मालूम होती है।"

राजा का इस प्रकार मौनभंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

भिखारी का खज़ाना

एक गरीब किसान एक दिन अपने खेत में काम करते थक गया, घर लौटकर आराम करते हुए उसने भगवान से प्रार्थना की–"भगवन, मुझे एक छोटा-सा खज़ाना दो।"

अचानक उसके सामने एक थैली आ गिरी। दूसरे ही क्षण उसे एक आवाज़ सुनायी दी–"इस थैली में तुम को एक सोने का सिक्का मिलेगा। उसे निकालोगे तो दूसरा मिलेगा। इस प्रकार जब तक तुम निकालते जाओगे, तब तक तुमको एक एक बार एक एक सिक्का मिलता जायगा। जब तुम तृप्त हो जाओगे, तब तुम इस थैली को नदी में फेंक दो। मगर एक बात याद रखो–थैली को नदी में फेंकने तक तुम वह धन ख़र्च नहीं कर सकते। अगर तुम थैली का धन ख़र्च करोगे तो तुम्हारा सारा धन गायब हो जायगा।"

किसान बहुत प्रसन्न हुआ। रात-भर थैली में से सोने के सिक्के निकालता रहा। दूसरे दिन घर में उसे खाने को कुछ न था। थैली को नदी में फेंकने तक वह उस सोने को ख़र्च नहीं कर सकता था। उसने सोचा कि एक रात और जाग कर एक और बोरा सोने से भर कर वह उसे नदी में फेंक देगा।

इस प्रकार कई दिन गुज़र गये। सोने के सिक्कों से बोरे भरते गये। किसान रोज़ भीख मांग कर अपना पेट भरता रहा।

आख़िर एक दिन वह किसान मर गया। अड़ोस-पड़ोस वालों ने आकर उसके घर में देखा–कई बोरे सोने के सिक्कों से भरे हुए हैं। सब चकित रह गये।

बावरा ब्राह्मण

प्राचीन काल में काशी में एक गरीब ब्राह्मण था। वह बेवकूफ़ था, इसलिए भीख माँगकर अपना पेट पालता था। इस तरह उसने थोड़ा धन बचाया। उसने सोचा कि वह धन ले जाकर वह दूसरे गाँव में आराम से दिन काटेगा। उसमें से थोड़ा धन देकर रेशम का एक टुकड़ा खरीदा। उस में अपना सारा धन बाँध दिया, सिर्फ़ थोड़े रुपये अपने रास्ते के खर्च के लिए कमर मे खोंस लिये। चलते-चलते एक जंगल आया। रास्ते में वह अपने रुपयों की गठरी को उछालते चलने लगा।

रास्ते में कुछ मुसाफ़िरों से उसकी मुलाक़ात हुई। उन्होंने उसे सावधन किया—"अरे बावरे ब्राह्मण! रुपयों की गठरी को ऐसा न उछालो, छिपाकर चलो। इस रास्ते में चोर और डाकू हैं।"

उसने मन में कहा—"क्या मैं अपने रुपयों की गठरी को चोरों के हाथों में पड़ने दूँगा! मैं बावरा थोड़े ही हूँ? इसे इस तरह ऊँचा रखूँगा, जिससे चोर हाथ उठाकर न ले सकें।" यह सोचकर उस बावरे ने एक लंबी लाठी ली। उसके छोर पर रुपयों की गठरी बाँध दी और लाठी उठा करके चलने लगा।

थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर चार चोर उस ब्राह्मण के सामने आये। ब्राह्मण नहीं जानता था कि वे लोग चोर हैं। इसलिए उसने उन लोगों से कहा—"देखो भाई, सुनते हैं कि इस रास्ते में चोर-बदमाश हैं। खबरदार रहो! मुझे देखते हो न, चोरों से बचने के लिए रुपयों की गठरी कितनी ऊँचाई पर रख ली है।"

ब्राह्मण की बात सुनकर चोर खिलखिला कर हँस पड़े। एक ने ब्राह्मण के गाल पर खींच कर एक चपत मारी। ब्राह्मण ने

महेन्द्र वर्मा

"बाप रे, मर गया!" चिल्लाते अपने हाथ की लाठी छोड़ दी।

चोर और ज़ोर से हँस पड़े और ब्राह्मण की रुपयों की गठरी लेकर वहाँ से चल पड़े।

"अरे, चोर के माने ये ही लोग हैं। शायद ये लोग मेरे रेशम को टुकड़े को सस्ते में बेच देंगे। मैंने उसे भीख माँगकर जो पैसे इकट्ठा किये, उन पैसों से खरीदा।" यह सोचकर ब्राह्मण चिल्ला उठा–"अबे चोर! रुपये लिये तो लिये, रेशम का टुकड़ा मुझे ही बेच दो, उसका दाम दूंगा।"

चोरों को मालूम हुआ कि उस ब्राह्मण के पास और रुपये हैं। वे लौट आये और उसकी कमर में खोंसे रुपये भी खींचकर फिर जाने लगे। ब्राह्मण सोचने लगा– "मैंने साल-भर मेहनत करके जो रुपये कमाये, उनको ये चोर पल भर में हड़पकर ले जा रहे हैं। इनका धंधा ही अच्छा मालूम होता है।" यह सोचकर ब्राह्मण ने उन चोरों को फिर पुकारा और कहा–" अबे चोर भाई! मुझे भी अपने साथ ले जाओ।"

चोरों ने मान लिया। सब मिलकर रात को एक गाँव में पहुँचे। चोरों ने मिट्टी की दीवारोंवाले एक घर में सेंध लगाया। ब्राह्मण को अन्दर भेज दिया।

वह एक बूढ़ी ब्राह्मणी का घर था। वह सवस्वती की पूजा का दिन था। बूढ़ी बड़े बनाते-बनाते कलेजे में पीड़ा का अनुभव करने लगी। इसलिए बड़े बनाना छोड़कर दूसरे कमरे में जा वहीं पर मर गयी।

ब्राह्मण को घर में प्रवेश करते ही बड़ों की गंध आयी। उसे बड़ी भूख लगी हुई थी। चोरों की बात वह बिलकुल भूल गया। स्नानागार में जाकर नहाया। जल्द ही संध्या-वंदन किया, तब बूढ़ी के पास पहुँचकर बोला–"बूढ़ी माँ, भूख लगी है, खाना परोसो।" बूढ़ी बोली-चाली नहीं। वह बूढ़ी को छूना नहीं चाहता

था। इसलिए चूल्हे पर से एक कलछी भर तेल ले आया और बूढ़ी के हाथ पर डाल दिया। तब भी बूढ़ी हिली नहीं। लाचार होकर उसने थपकी देते बूढ़ी को जगाने की कोशिश की। बूढ़ी की आँखें खुली तो थीं, पर वह मर गयी थी।

ब्राह्मण घबराकर चिल्ला उठा। काँपते हुए वह घर के खंभे पर जा छिपका। चोरों ने ब्राह्मण की चिल्लाहट सुनकर सोचा कि ब्राह्मण ने उन लोगों को बुलाया है। वे सब अन्दर पहुँचे। लेकिन इस बीच में ब्राह्मण की चिल्लाहट सुनकर अड़ोस-पड़ोस के लोग जाग पड़े और वे सब भी बूढ़ी के घर में आये। चारों चोर चारपाइयों के नीचे जा छिपे।

अड़ोस-पड़ोसवालों ने देखा कि बूढ़ी मर गयी है। इसलिए वे लोग आपस में चर्चा करने लगे–"यह बूढ़ी बीमार तक न हुई, कैसे मर गयी?" एक ने कहा–"बीमारी कुछ नहीं। सरस्वती की पूजा के लिए बड़े भी पका रही थी, न मालूम कैसे मर गयी? ऊपरवाला ही जानता है!"

"हाँ, हाँ, तुम ठीक कहते हो! सब कुछ ऊपरवाला ही जाने।" लोगों ने उसकी हाँ में हाँ मिलायी। उनकी बातें सुननेवाले ब्राह्मण को बड़ा गुस्सा आया।

"तब तो तुम लोगों का विचार है कि उस बूढ़ी को मैंने ही मार डाला? मैं कुछ नहीं जानता, सच बताता हूँ। चाहे तो चारपाइयों के नीचे छिपे चोरों से पूछकर देखो।" खंभे पर से ब्राह्मण ने कहा।

और क्या था, चारों चोर पकड़े गये। गाँव के अधिकारी ने ब्राह्मण की गवाही सुनकर ब्राह्मण के रुपये उसे दिलाया। गाँव के वैद्य ने बूढ़ी की जाँच करके बताया–"बूढ़ी के कोई रोग नहीं हुआ है। बुढ़ापे के कारण मर गयी है। वह पुण्यात्मा है, पर्व के दिन मर गयी है।"

श्येन और गरुड़

एक जमीन्दार के यहाँ गाँव का कर चुकाने एक छोटे से देहात से एक आदमी पहुँचा। ज़मीन्दार ने उस आदमी से इधर-उधर की बातें करके आखिर पूछा—"मैं एक श्येन के बच्चे को पालना चाहता हूँ। क्या तुम्हारे गाँव में मिल सकते हैं?"

"क्यों नहीं? मेरे घर के पीछे ही एक टीले पर श्येनों का घोंसला है। उसमें बच्चे भी हैं।" देहाती ने जवाब दिया।

"बहुत अच्छा! मैं फुरसत मिलने पर तुम्हारे गाँव में आऊँगा, तब श्येन के बच्चों को ले जाऊँगा।" ज़मीन्दार ने जवाब दिया।

उस आदमी ने गाँव पहुँचकर गाँववालों से जब यह बात कही, तब सब परेशान हुए और कहने लगे—"ज़मीन्दार आवेंगे तो यहाँ पर उनके ठहरने का इंतज़ाम कैसे किया जा सकता है? उनके आतिथ्य का खर्च हम कहाँ उठा सकते हैं? तुमने कैसा काम किया?"

देहाती ने सोचा कि ज़मीन्दार को अपने गाँव में आने से रोकने का उपाय उसे खुद सोचना है। इसलिए कुछ सप्ताह बाद वह फिर ज़मीन्दार के गाँव में पहुँचा। उसे देखते ही ज़मीन्दार ने पूछा—"श्येन के बच्चे बड़े हो गये हैं न?"

"बड़े तो खूब हो रहे हैं, अभी से 'कृष्ण!' 'कृष्ण' कहकर चिल्लाते भी हैं।" देहाती ने जवाब दिया।

"छी, छी, तब तो वे श्येनपक्षी नहीं, गरुड़पक्षी हैं! मुझे उनकी जरूरत नहीं है।" ज़मीन्दार ने कहा।

सज़ा कैसी?

दादा के पास शिकायत आयी–

"दादाजी! दादाजी! छोटे मुन्ने ने ही माँ के सर पर पीटा है!"

दादा ने मुन्ने की ओर देखकर पूछा– "क्यों रे, माँ को पीटा? क्यों पीटा?"

"मिठाई खरीदने के लिए माँ से दस पैसे मांगा, तो नहीं दिया, दादाजी।" मुन्ने ने रोते हुए जवाब दिया।

"अरे पगले! लो ये दस पैसे!" यह कहते दादा ने कमर में से दस पैसे का सिक्का निकालकर छोटे मुन्ने के हाथ में रखा।

बाक़ी बच्चों को अचरज हुआ। उन लोगों ने दादा से पूछा–"क्यों दादाजी? माँ को उसने पीटा है! उसे सज़ा देनी है। उल्टे आप पैसे क्यों देते हैं?"

"क्या तुम लोगों ने सुलतान की कहानी नहीं सुनी?" दादा ने सुंघनी की डिबिया निकालते हुए पूछा।

"कहिये दादाजी, हमने वह कहानी नहीं सुनी!" बच्चों ने दादा को घेर लिया।

दादा ने इतमीनान से सुंघनी लेकर कहानी शुरू की–

एक शहर में एक सुल्तान था। उसके एक बहुत बड़ा बगीचा था। उसमें जहांगीर क़िस्म के आम लगे थे। शाम के समय सुल्तान अपने मंत्रियों को साथ लेकर बगीचे में जाते और उनसे बातचीत करते अपना समय काटते थे। यह क्रम बराबर चलता रहा।

उस शहर में एक भिखारी था। वह सारे शहर में घूमकर भीख मांगता और अपना पेट पालता। गरमी के दिन थे। एक दिन सारे शहर में घूमने पर भी उसे एक कौड़ी भी न मिली। भूख उसे सताने लगी। शाम

मायादेवी

तक वह सारा शहर घूमता रहा। आखिर थककर वह सुल्तान के बगीचे में पहुँचा।

उस बगीचे में अच्छे अच्छे आम लगे थे। गरमी के मौसम में तो आम खूब पकते भी हैं।

उन आमों को देखते ही भिखारी की भूख और बढ़ गयी। वह भूख के मारे परेशान था। भिखारी ने एक पत्थर लेकर आम के गुच्छे पर निशाना लगाकर दे मारा। दो फल नीचे गिरे। जल्दी जल्दी उसने उन फलों को खाकर अपनी भूख मिटाने की कोशिश की।

बात यहीं तक समाप्त नहीं हुई। उसने जो पत्थर फेंका। वह फलों से तो जा लगा और आगे जाकर वहाँ गिरा जहाँ पर सुल्तान बैठा था। सुल्तान के सर पर लगने से उसे चोट आयी।

सुल्तान गुस्से में आकर चिल्ला पड़ा—"वह बदमाश कौन है, जिसने मुझ पर पत्थर फेंका? उसे खींचकर मेरे पास ले आओ।" उसे पकड़ लाने सुल्तान ने अपने भटों को भेजा।

भटों ने देखा, एक भिखारी बैठे बैठे आम खा रहा है! उन लोगों ने सोचा कि उसीने पत्थर फेंका है। इसलिए उसे घसीटते हुए सुल्तान के पास ले गये।

"अरे बदमाश! तुमने ही यह पत्थर मुझ पर फेंका?" यह कहते सुल्तान ने वह पत्थर भिखारी को दिखाया।

"जी हुजूर! मैंने ही वह पत्थर फेंका।" डर के मारे कांपते हुए भिखारी ने जवाब दिया।

"क्यों फेंका?" सुल्तान ने भिखारी से फिर पूछा।

"सरकार, मुझे भूख लगी थी। दिन-भर कुछ खाया न था। पेड़ पर आम दिखायी पड़े। पत्थर फेंका, दो फल गिरे। मैंने अपनी भूख मिटायी।" भिखारी ने सच्ची बात बतायी।

सुल्तान थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर अपने खजांची की ओर मुड़कर बोला—"इस भिखारी को हर महीने दस दस दीनार इसकी ज़िंदगी-भर खज़ाने से दिलाया करो।"

सभी मंत्री अचरज में आ गये और सबने एक स्वर में पूछा—"हुजूर, इसने आप पर पत्थर फेंका। इसे सज़ा देने से दूर रहा, उल्टे इनाम दिला रहे हैं। यह कैसी बात है?"

"अरे भाई, तुम लोगों की खोपड़ी में गोबर भरा है। यह बताओ कि आम का पेड़ बड़ा है या मैं बड़ा हूँ?" सुल्तान ने पूछा।

"आप भी कैसी बात करते हैं? आप कहाँ? और यह आम का पेड़ कहाँ? दोनों की बराबरी कैसी?" मंत्रियों ने जवाब दिया।

"पत्थर फेंकने पर इस पेड़ ने उसकी भूख मिटायी? इसकी भूख हमेशा के लिए मिटाने की अक्ल मुझ में होनी चाहिये कि नहीं? उस पत्थर ने ही तो मुझे मारा?" सुल्तान ने जवाब दिया।

सुल्तान के इस अनुपम ज्ञान पर मंत्री सब मुग्ध हुए।

राजा की समस्या

एक नगर में एक राजा था। वह अच्छा आदमी तो जरूर था, लेकिन उसकी अक्ल मोटी थी। एक दिन एक ब्राह्मण राजा के घर पर पुराण का वाचन कर रहा था। उस संदर्भ में यमलोक के बारे में पढ़ते हुये सुनाया कि वहाँ पर तरह-तरह के पाप करनेवाले कैसी सजाएँ पाते हैं।

पुराण का वाचन समाप्त होते ही राजा ने ब्राह्मण से पूछा–"पंडितजी, आप स्वर्ग और नरक के बारे में अच्छी तरह जानते हैं। लेकिन मेरी इस शंका को कृपया दूर कर दीजिये। जहाँ तक हम जानते हैं–हमारे ऊपर आकाश है और नीचे जमीन है। भूलोक में तरह तरह के प्राणी हैं। उनमें से कुछ लोग स्वर्ग में और कुछ लोग नरक में कैसे जाते हैं? मुझे विस्तारपूर्वक समझाइये।"

यह सवाल सुनकर ब्राह्मण चकित रह गया। फिर यह सोचकर वह डर भी गया कि जवाब न देने पर न मालूम राजा क्या कर बैठेंगे! "महाराज! आप के सवाल का जवाब देना हो तो सभी शास्त्रों का परिशीलन करना होगा। इसलिए मुझे थोड़ा समय दीजिये।" राजा से यह कह कर वह ब्राह्मण दूसरे दिन सुबह अपने गाँव की ओर भाग गया।

दूसरे दिन राजा को मालूम हुआ कि वह ब्राह्मण भाग गया है। उसने सोचा कि उसके सवाल का जवाब न दे सकने के कारण ही वह भाग गया होगा। इसलिए राजा ने सोचा कि इतना पढ़ा-लिखा आदमी भी उसके सवाल का जवाब न दे सका, इसका मतलब यह है कि उसका सवाल बहुत ही बड़ा है। यह सोचकर वह जो भी दीखता, उस से वही सवाल पूछने लगा।

धर्मेन्द्र कपूर

जल्द ही राज्य-भर में राजा का सवाल सब को मालूम हो गया। पुराण सुनानेवाले ब्राह्मण के एक लड़का था। वह अव्वल दर्जे का आवारा था। वह हमेशा अपनी माँ को तंग करता था। एक दिन जब उसकी माँ गेहूँ पीस रही थी, तब वह अपनी माँ को सताने लगा।

माँ ने खीझ कर कहा—"राजा की समस्या तुम सुलझा सकते तो क्या ही अच्छा होता?"

—"समस्याएँ तो हम जैसे गरीबों के लिए होती हैं। मगर राजा के लिए भी कहीं होती हैं? वह कैसी समस्या है!" लड़के ने अपनी माँ से पूछा। वह भी माँ के सामने बैठकर चक्की पीस रहा था।

"हमें ऊपर आकाश दिखायी देता है, नीचे ज़मीन। इस ज़मीन पर करोड़ों की संख्या में प्राणी हैं। उनमें कुछ लोग स्वर्ग में और बाक़ी लोग नरक में क्यों और कैसे जाते हैं? यही राजा की समस्या है?" यह कहते उस लड़के की माँ ने चक्की के ऊपर का पाटा उठाकर दिखाया। तब उस लड़के ने देखा कि चक्की में गेहूँ के कुछ दाने फटे हुए हैं और कुछ दाने ज्यों के त्यों हैं। झट उसकी समझ में कोई बात आयी। वह सीधे राजमहल में गया और दरबान से बोला—"मैं राजा के दर्शन अभी करना चाहता हूँ।"

उस लड़के के वेश को देख द्वारपाल बोले—"राजा तुम जैसे लोगों को थोड़े ही दर्शन देंगे? जाओ!"

"मैं राजा की समस्या को हल करने आया हूँ। यह बात राजा से कह दो।" ब्राह्मण के लड़के ने कहा।

राजा को जब ख़बर मालूम हुई तब उसे अन्दर आने की अनुमति मिल गयी। लेकिन उस लड़के को देखते ही राजा को संदेह हो गया कि वह उसके सवाल का जवाब दे न सकेगा।

"मेरी समस्या क्या तुम्हारी समझ में आ गयी? तुम सचमुच जवाब दे सकते हो?" राजा ने उस लड़के से पूछा।

"मैं केवल मौखिक जवाब नहीं दूंगा, बल्कि प्रत्यक्ष दिखा दूंगा। ब्राह्मण के लड़के ने कहा।

राजा ने तुरंत अपने सभी सभासदों को बुला भेजा। भरी सभा में ब्राह्मण के लड़के को बुलवाकर अपनी समस्या का समाधान देने का आदेश दिया।

चक्की और गेहूँ मंगवाये गये। ब्राह्मण के लड़के ने मुट्ठी-भर गेहूँ चक्की में डालकर पीसते हुए कहा—"महाराज! देखिये। ऊपर घूमनेवाला पाटा आकाश है, नीचे जो पाटा स्थिर है, वह ज़मीन है। इसमें डाले गये गेहूँ प्राणी हैं। गेहूँ डालने वाले भगवान हैं। हाथ की पाँचों उंगलियाँ पंचभूत हैं। चक्की का मूठ यमराज हैं। वे पापियों को इस प्रकार सताते हैं।" यह कहते वह लड़का ऊपर का पाटा उठाकर बोला—"देखा महाराज? कई दाने पिसकर यमयातनाएँ झेल रहे हैं, याने नरक भोग रहे हैं। लेकिन कुछ दाने ज्यों के त्यों हैं। ये यमलोक से बचे हुए प्राणी हैं। उन्हें नरक का भय नहीं है। वे स्वर्ग का सुख भोग रहे हैं।"

राजा बहुत प्रसन्न हुआ और पूछा—"ओह, तुम कैसे ज्ञानी हो? बताओ, जल्दी! तुम किस के लड़के हो?"

"महाराज! आप को पुराण सुनानेवाले पंडित का पुत्र हूँ।" ब्राह्मण के लड़के ने उत्तर दिया।

"तुम अपने पिता से भी बड़े ज्ञानी हो!" यह कहकर राजा ने उसे काश्मीर शाल और पुरस्कार देकर उसका सम्मान कर के भेज दिया। उस दिन से वह आवारा लड़का अपने नटखट के काम छोड़कर अच्छी ज़िंदगी बिताने लगा।

दो किसान

रंगपूर राज्य में राम और सोम नामक दो किसान थे। वे अड़ोस-पड़ोस में रहते थे। बड़े दोस्त भी थे। उनके दोनों परिवार एक परिवार जैसे रहा करते थे।

राम ने अपने घर के बड़े अहाते में एक बगीचा लगाया, सोम ने तरकारियाँ लगायीं। दोनों खेती करने में बड़े कुशल थे। दोनों ने खूब धन और नाम भी कमाया।

एक दिन सोम जब अपनी लड़की देखने उसके ससुराल जाने लगा, तब राम को भी अपने साथ ले गया। दोनों वहाँ पर दो दिन रहे, लौटते समय रास्ते में एक जगह हाट लगा था। दोनों ने अपने लिए ज़रूरी चीज़ें खरीदीं। एक दूकान में उन्हें संतरे के दो पौधे दिखायी दिये। राम ने झट उनमें से एक पौधा खरीद लिया। दूसरा पौधा जो बचा था, उसे सोम ने खरीदा। सोम का दूसरा पौधा खरीदना राम को अच्छा न लगा। क्यों कि बहुत दिन पहले उन दोनों ने यह निश्चय कर लिया था कि फल के पौधों को पालना राम का काम है और तरकारी पैदा करना सोम का काम है। इस तरह दोनों अलग पौधे जब तक पालते जायेंगे, तब तक दोनों में झगड़ा होने की नौबत न आवेगी। लेकिन सोम ने राम के साथ संतरे का पौधा ख़रीदा था। इसलिए राम के मन में सोम के प्रति जो असंतोष पैदा हुआ, उसे उसने प्रकट होने न दिया। दोनों हमेशा की तरह दुनियादारी बातें करते अपने गाँव में लौट आये।

कुछ साल बीत गये। राम सोम के संतरे के पौधे की बात बिलकुल भूल गया। राम ने जो पौधा लगाया था, उसमें फूल तो लगे, लेकिन फल नहीं

लगते थे। इसलिए उसका विचार था कि वही फल पैदा न कर पाया तो सोम से क्या बनेगा? लेकिन एक दिन सोम के लड़के ने टोकरी भर संतरे लाकर राम के सामने रख दिये और कहा—"मेरे पिताजी ने आपको ये फल देने को कहा है।"

"अरे, ये संतरे कहाँ से लाये?" राम ने उस लड़के से पूछा। "हमारे पेड़ में लगे हैं न!" सोम के लड़के ने जवाब दिया।

राम के मन में सोम के प्रति ईर्ष्या पैदा हो गयी। उसने अपने पेड़ के चारों ओर खोदकर खाद डाली। तीसरे दिन तक पेड़ पूरा सूख गया।

राम के मन में अब सोम के प्रति ईर्ष्या की आग भभक उठी। सोम का सर्वनाश करने पर वह तुल गया। परंतु वह सोम की हानि किसी भी तरह से नहीं कर सकेगा! राम सोचने लगा कि कोई ऐसा उपाय ढूँढे जिससे वह सोम का सर्वनाश कर सके और उसे पता न लगे कि राम ने ही यह काम किया है।

जल्द ही राम को ऐसा मौक़ा मिल गया। एक बार राजकुमारी बीमार पड़ गयी। वैद्य यह बता न सके कि वह अमुक बीमारी है। उनका इलाज़ बेकार हो गया। राम का मामा राजा के दरबार में नौकर था। इसलिए एक दिन वह अपने मामा के साथ दरबार में गया। राजा के दर्शनकर बोला—"महाराज, मैं राजकुमारी की बीमारी के इलाज के लिए एक दवा बता सकता हूँ। अगर आपको एतराज न हो तो उसका प्रयोग कर देख सकते हैं।"

राजा ने कहा—"क्यों नहीं, जरूर उसका प्रयोग करेंगे, बताओ तो।"

"मेरे पड़ोसी सोम के अहाते में एक संतरे का पेड़ है। उसके फल बहुत बड़े हैं और उनके रस में रक्तधातु है। उस पेड़ की जड़ों का रस निकालकर राजकुमारी

को पिला दे तो उनकी बीमारी दूर हो सकती है।" राम ने बताया।

"अरे, संतरे के रस में रक्तधातु कहाँ से आवेगा? जब तक मैं अपनी आँखों से न देखूँगा, तब तक मैं यक़ीन नहीं कर सकता।" राजा ने कहा।

राम तुरंत सोम के घर गया। उससे माँगकर एक फल ले आया। चाकू लेकर राजा के दरबार में पहुँचा। राजा ने उस फल को देख चकित होकर कहा– "यह तो विचित्र संतरा है।"

"इसका रस देखिये।" यह कहते राम ने चाकू से उस संतरे को काटा। फल से रक्तवर्ण का रस निकला। राजा को राम की बात पर विश्वास हुआ। उन्होंने तुरंत अपने भटों को आदेश दिया कि वे सोम के संतरे के पेड़ को जड़ सहित उखाड़कर ले आवे। सोम के रोते-कलपते रहने पर भी उसकी परवाह किये बिना ही राजभट पेड़ उखाड़कर राजदरबार में ले गये। संतरे की जड़ों को पिसवाकर उसके रस को राजकुमारी से राजा ने पिलवाया। लेकिन उसकी बीमारी ज़रा भी कम नहीं हुई।

राम ने कभी नहीं सोचा था कि इस औषध से राजकुमारी चंगी हो जायगी।

उसकी इच्छा पूरी हो गयी—सोम के संतरे का सर्वनाश हो गया। यही उसके लिए संतोष की बात थी। राजा ने जब उससे पूछा—"तुम्हारा औषध काम नहीं कर पाया!" राम ने झूठ-मूठ राजा को यह कहकर बहकाया—"महाराज, दवा का असर एक हफ़्ते-भर में मालूम होगा!" एक सप्ताह बीत गया, मगर बीमारी कम नहीं हुई, बल्कि और बढ़ गयी।

राजा ने क्रोध में आकर राम को क़ैद में डलवा दिया।

सोम ने अनुमान लगाया कि राम ने ऐसा क्यों किया है। राम इस कुविचार में पड़कर भविष्य में होनेवाले ख़तरे की कल्पना न कर सका। फिर भी राम पर सोम को बड़ी दया आयी।

सोम का पिता कुछ जड़ी-बूटियों का रहस्य जानता था। उसने एक गोसाई से उन दवाइयों के बारे में थोड़ा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। सोम ने सोचा कि उस गोसाई के ज़रिये राजकुमारी की बीमारी को दूर करने का इलाज जान सके तो राम को बचाया जा सकता है। सोम उस गोसाई की खोज में चला गया। उससे राजकुमारी की बीमारी के सभी लक्षण बताकर उसकी कृपा प्राप्त करके

एक दवा ले ली और लौटकर उसने वह दवा राजकुमारी को दिलायी। उस औषध से राजकुमारी जल्द चंगी हो गयी।

राजा खुशी से फूला न समाया; उसने सोम से कहा–"तुमने मेरी बेटी की जान बचायी। मैं कैसे तुम्हारा ऋण चुका सकता हूँ? पूछो, तुम क्या चाहते हो?"

"आप यदि मुझ पर प्रसन्न हैं तो कृपया राम को जेल से छुड़वा दीजिये। उसने राजकुमारी के प्रति कोई द्रोह नहीं किया। मैं यह बात शपथ खाकर कह सकता हूँ।" सोम ने राजा से कहा।

राजा ने राम को जेल से रिहा किया। राम को जब यह मालूम हुआ कि उसी सोम ने उसे जेल से छुड़ाया जिसका सर्वनाश करने पर वह तुल गया था। तब वह सोम से गले लगकर रोने लगा।

"जो कुछ हुआ, उसे भूल जाओ! चाहे जो भी हुआ हो, हम दोस्त हैं। आपस में हमें एक दूसरे की मदद करनी है...लेकिन यह बताओ कि संतरे में से तुमने खून गिरवा दिया, यह कैसे हुआ? वह रहस्य मुझे भी तो बताओ न?" सोम ने पूछा।

"चाकू पर मैंने लाल जपा पुष्प की पंखुडियाँ चार-पाँच बार मल दीं। जपा पुष्प के रस से भीगे चाकू से संतरा काटने पर उसका रस रक्तिम वर्ण का हो जाता है। मैंने यह विद्या बहुत समय पूर्व एक जादूगर से सीख ली थी। अब मुझे मालूम हुआ कि ऐसी विद्याओं का प्रयोग दूसरों की भलाई के लिए करना उचित है। परंतु दूसरों की हानि करने में उनका प्रयोग करने से उल्टा परिणाम होता है।" राम ने कहा।

इसके बाद राम और सोम पहले की तरह मैत्री के साथ रहते एक दूसरे की मदद करते सुखपूर्वक रहने लगे।

मोटा पैर

एक गाँव में एक जमींदार था। उसके यहाँ शादी होनेवाली थी। जमींदार ने शहर से दर्ज़ी को बुलाकर शादी के लिए आवश्यक क़ीमती कपड़े सिलाने का इंतज़ाम किया। दर्ज़ी ने वे सभी पोशाक पहनकर उनकी जाँच करना शुरू किया। वह बैठा था। एक पैर उसने मोड़ लिया और दूसरा पैर फैलाया। वह फील पाँव था।

जमींदार ने उस फील पाँव को देख अचरज में आकर पूछा—"यह कैसा मोटा पैर है?"

"आप ने देखा ही कहाँ? उससे भी मोटा पैर अंदर जो है?" दर्ज़ी ने जवाब दिया।

जमींदार के भी फील पाँव थे। उसने सोचा कि दर्ज़ी ने उसके पाँव देखकर ही यह बात कही है। इसलिए तैश में आकर उसने कहा—"इस घर में उससे मोटा पैर दूसरा नहीं है। सौ रुपये दाँव लगाता हूँ। दिखाओ?"

दर्ज़ी ने कहा—"मैंने दाँव को मान लिया है। मेरा दूसरा पैर देखिये।" यह कहते उसने अपने मोड़े हुए पैर दिखाया। वह पैर उससे भी मोटा था।

जमींदार ने चुपचाप दर्ज़ी को सौ रुपये दिये।
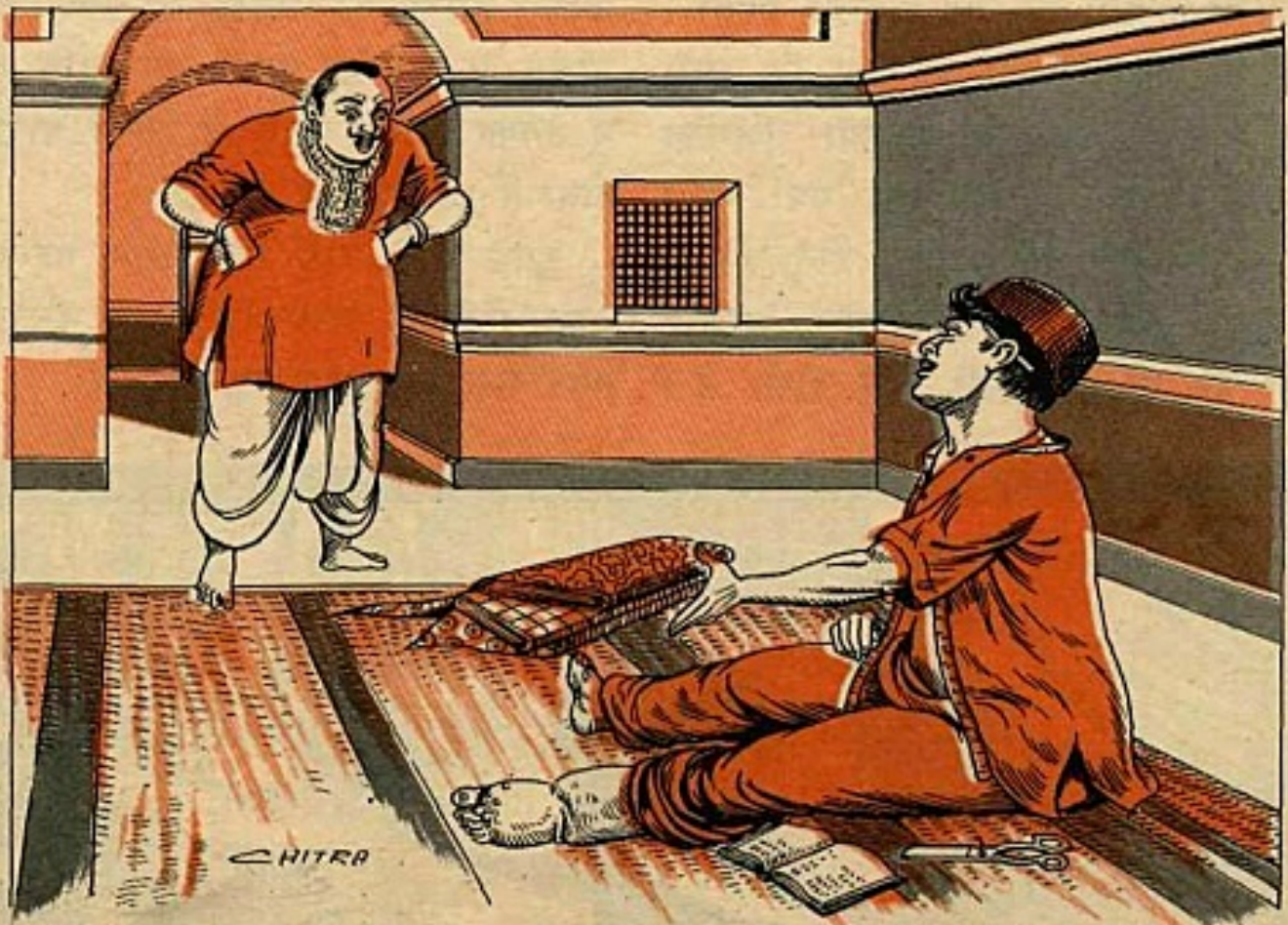
मछलियों का चोर

मछुओं की एक बस्ती में साधूराम और लक्खी नामक दंपति था। साधूराम मंद बुद्धिवाला था। इसलिए लक्खी अपनी होशियारी से ही गृहस्थी चलाया करती थी। साधूराम चार-पाँच मछुओं के साथ समुद्र में मछली पकड़ने नाव पर जाया करता था। सब मिलकर जो मछली पकड़ते, उसमें साधुराम का हिस्सा उसे मिल जाता था। उन मछलियों को बेचकर लक्खी गृहस्थी का खर्च चलाया करती थी।

एक दिन साधूराम को मछली की तरकारी खाने की इच्छा हुई। उस दिन उसके हिस्से में जो मछलियाँ मिलीं, उन्हें घर जाकर पत्नी से कहा—"आज तुम मछली न बेचो, तरकारी बनाओ, मुझे खाने की बड़ी इच्छा है।"

"अच्छा, तब तो इन मछलियों को ख़ूब धोकर लाओ जिससे उनकी बू जाती रहे।" लक्खी ने अपने पति से कहा।

साधूराम की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। वह मछलियों की टोकरी लेकर तालाब की ओर निकला। रास्ते में उसे रामावतार मिला। साधूराम को जल्दी जल्दी जाते देख उसने पूछा—"साधूराम, कहाँ जाते हो?"

"मेरी घरवाली ने इन मछलियों को धो लाने को कहा है। मैं इनकी बू दूर करने ले जा रहा हूँ। आज हम मछली खानेवाले हैं।" साधूराम ने कहा।

"अरे बुद्धू! कहीं धोने से मछलियों की बू जायगी! उनको सुखाना है। देखो, मेरे पास चार सूखी मछलियाँ हैं। तुम मुझे उन मछलियों को देकर ये सूखी मछलियाँ ले जाओ और तरकारी बनवाकर खा लो।" रामावतार ने समझाया।

रामवतार ने अपनी सूखी मछलियाँ देकर साधूराम की ताजा मछलियाँ लीं

सोमेश्वर शर्मा

और जल्दी जल्दी वहाँ से खिसक गया। असल में बात यों थी–उसी दिन जो व्यापारी जहाज़ उस बंदरगाह में आया था, उसमें से रामावतार ने उन सूखी मछलियों को चुराया था। चोरी का पता लगने पर वह पकड़ा जायगा, इसलिए मंदबुद्धिवाले साधूराम को देखते ही उसके मन में यह ख़्याल आया कि मछलियाँ बदलने से वह पकड़ा न जायगा। यही सोचकर अपनी मछलियाँ साधूराम को दे उसकी मछलियाँ लेकर वह चंपत हो गया। साधूराम ने सूखी मछलियाँ ले जाकर पत्नी से कहा–"अब जल्दी तरकारी बना दो, भूख लगी है।"

"अरे, ये तो सूखी मछलियाँ हैं। हमारी मछलियाँ कहाँ गयीं?" लक्खी ने पूछा। साधूराम ने सारी कहानी सुनायी।

अपने पति की मंदबुद्धि से लक्खी पहले ही परिचित थी। इसलिए वह दुखी होते बोली–"लो, तरकारी के लिए एक मछली रखती हूँ, बाक़ी बेच आओ।"

साधूराम को भेजकर लक्खी ने मछली काटी तो उसके पेट से एक हीरा निकला।

जहाज़ों के व्यापारी ने चोरों के भय से अपने पास जो हीरे थे, उनको सूखी मछलियों में छिपा रखा था। जहाज़ के बंदरगाह में पहुँचने पर उसने मछलियाँ गिनवाकर देखा तो उनमें चार मछलियाँ कम थीं। तुरंत उसने राजा के पास जाकर शिकायत की कि उसके जहाज़ से चार सूखी मछलियों की चोरी हो गयी है और उनमें हीरे रखे हुए हैं।

राजा ने उसी समय अपने भटों को आदेश दिया कि गाँव में जाकर जिन जिन के पास सूखी मछलियाँ हों, उन सबको पकड़ लाओ। उन लोगों ने साधूराम को पकड़ा। उसे राजा के पास ले आये। व्यापारी ने मछलियों को पहचान कर कहा–"ये तो मेरी ही मछलियाँ हैं। चाहे तो आप उनके पेट चीरवाकर देखिये, उनमें हीरे मिलेंगे।"

तीनों मछलियों में क़ीमती हीरे मिले।

"एक और मछली भी चोरी गयी है।" व्यापारी ने कहा।

"इन मछलियों को तुमने ही जहाज़ से चुराया?" राजा ने साधूराम से पूछा।

"मैं जहाज़ की बात नहीं जानता हूँ। रामावतार ने मुझ से ताज़ा मछलियाँ लेकर ये सूखी मछलियाँ दी हैं। एक मछली को तरकारी बनाने घर पर दिया और इनको बेचने ले आया हूँ। इतने में भटों ने मुझे पकड़ लिया। मैं चोर नहीं हूँ।" साधूराम ने कहा। राजा के भटों ने साधूराम के घर जाकर उसकी पत्नी को मछली के पेट में जो हीरा मिला था, उसे लाकर राजा के हाथ दिया। मछली पक रही थी।

राजा ने रामावतार को पकड़ लाने भटों को भेजा—"क्या तुमने ही ये सूखी मछलियाँ साधूराम को दीं?" राजा ने रामावतार से पूछा। रामावतार घबराये हुए स्वर में बोला—"महाराज, मैं इन मछलियों के बारे में कुछ नहीं जानता।"

"इनमें हीरे मिले हैं। साधूराम कहता है कि ये मछलियाँ तुमने ही उसे दी हैं। तब तो ये हीरे तुम्हारे नहीं हैं न?...लो, साधूराम! ये हीरे तुम्हारे ही हैं! तुम्हीं रख लो।" राजा ने कहा।

तुरंत रामावतार लोभ में आकर बोल उठा—"महाराज, ये सूखी मछलियाँ मैंने ही साधूराम को दी हैं। अगर उनमें हीरे हों तो मुझे ही मिलने चाहिये।"

यह साबित हो गया कि रामावतार ही चोर है। राजा ने रामावतार को उचित सज़ा देकर हीरे व्यापारी को दिलाया। व्यापारी ने ख़ुश होकर कुछ रुपये साधूराम को दिये। रुपये लेकर साधूराम बड़ी ख़ुशी के साथ घर लौटा और बड़ी तृप्ति से मछली की तरकारी खायी।

महाबली

एक गाँव में एक बलवान अमीर था। उस गाँव में उससे बढ़कर दूसरा बलवान कोई न था। वह इस ख्याल से एक थैली में सौ रुपये भरकर अपने घोड़े पर सवार हो सभी गाँव छानता रहा कि कहीं उससे भी बलवान हो तो उसका पता लगवे। जहाँ भी जाता, उस गाँव के लोगों से वह अमीर पूछता–"इस गाँव में कोई महाबली है?"

आख़िर एक गाँव के लोगों ने बताया–"इस गाँव में लुहार हनुमान महाबली है।" अमीर अपने घोड़े पर सवार हो हनुमान की दूकान पर पहुँचा। हनुमान को देखते ही घोड़े पर से अमीर ने पूछा–"हे लुहार! चुरुट जलाने के लिए आग तो दो।"

लुहार हनुमान ने वहीं पर बैठे बैठे एक चिमटे से आग का टुकड़ा पकड़कर अमीर की ओर बढ़ाया। अमीर ने बड़ी आसानी से चिमटा हाथ में लिया, चुरुट जलाकर उसे लौटाते हुए पूछा–"क्या मेरे घोड़े के लिए एक नाल बना सकोगे?"

"बनाकर तैयार रखे हैं, ये लीजिये।" यह कहते हनुमान ने एक नाल अमीर के हाथ दी। अमीर ने उसे झट तोड़कर कहा–"यह तो टूट गयी, दूसरी दो!" उसने दूसरी नाल भी तोड़ दी और तीसरी हाथ में लेते हुए हनुमान के हाथ एक रुपये का सिक्का दिया। हनुमान ने झट उसे तोड़कर कहा–"अरे, यह टूट गया, दूसरा दीजिये।" अमीर ने दूसरा सिक्का दिया। हनुमान ने उसे भी तोड़ दिया।

"तुम सचमुच बलवान हो! यह थैली ले लो!" यह कहते अमीर ने अपने रुपयों की थैली हनुमान के हाथ दी और वह वहाँ से चला गया!

लालच

अरब के एक छोटे से गाँव में गुलबीबी नामक एक गरीबिन थी। उसका पति ऊँटों की देखभाल किया करता था। गुलबीबी एक अमीर व्यापारी के घर नौकरी करती थी। वे दोनों गरीब पति-पत्नी मिट्टी की दीवारोंवाली झोंपड़ी में रहा करते थे।

गुलबीबी जिस व्यापारी के घर में चाकरी करती थी, उसकी मालिकिन अपने खाविंद की आँख बचाकर घर की चीज़ें बेच देती और वे रुपये छिपा रखती। महीने के अंत में जब गुलबीबी को तनख़्वाह देने का वक़्त आता, तब वह यह शिकायत करती कि घर में वह चीज़ खो गयी, यह चीज़ खो गयी, उसका आरोप गुल पर करती और उनका दाम गुल की तनख़्वाह में से काट देती। गुलबीबी लाचार होकर जो कुछ मिलता, ले लेतीं।

एक दिन रात को बड़े ज़ोर की वर्षा हुई। गरीब पति-पत्नी रात-भर सर्दी में कांपते एक कोने में सिकुड़कर बैठे रहें। बरसात के कारण झोंपड़ी की दीवार में थोड़ा हिस्सा टूट भी गया। सवेरा होते ही वे दोनों दीवार बनाने में लग गये। उस वक़्त उनको उस दीवार में मुहर बंद एक चाँदी का लोटा मिला। मुहर तोड़कर देखा तो लोटे-भर में सोने के सिक्के थे। यह सोचकर वे दोनों खुश हुए कि अब उनकी गरीबी दूर हो जावेगी।

गुलबीबी का पति दो-तीन सोने के सिक्के लेकर ज़रूरी चीज़ें खरीदने के लिए दूकान पर गया। गरीब के पास सोने के सिक्के देख दूकानदार को संदेह हो गया कि वह चोरी का माल होगा और उसने उस गरीब को वहीं रोककर गाँव के अधिकारी को बुला भेजा।

गंगादेवी

कि वे सिक्के व्यापारी की पत्नी के हैं और उसको दिलाये।

यह घटना बड़े विचित्र ढंग से तो घटी, लेकिन व्यापारी की समझ में यह बात बिलकुल न आयी कि उसकी पत्नी के पास सोने के ये सिक्के कहाँ से आये? इस रहस्य का पता लगाने का उसने निश्चय किया।

गुलबीबी को व्यापारी की पत्नी पर असहनीय क्रोध आया। रात-भर वह सोचती रह गयी। आखिर उसने व्यापारी की पत्नी से बदला लेने का एक उपाय सोचा।

इस बीच यह बात गुलबीबी की मालिकिन को मालूम हो गयी। वह अपने पति को साथ लेकर गाँव के अधिकारी के पास पहुँची और बोली–"हुज़ूर! इसकी औरत हमारे घर में नौकरी करती है, जो भी चीज़ मिलती है, ले जाती है। ये सिक्के मेरे हैं। उसीने हड़प लिये हैं।"

गुलबीबी का पति कुछ नहीं बोला। मौन रहा। उसका डर था कि असली बात बता देने से बाक़ी सिक्के भी लेकर ये बड़े बड़े लोग सब आपस में बांट लेंगे।

गुलबीबी के पति ने कोई जवाब नहीं दिया, इसलिए गाँव के अधिकारी ने सोचा

दूसरे दिन गुलबीबी जब व्यापारी के घर काम करने गयी, तब व्यापारी की पत्नी ने धोने के लिए गुलबीबी के हाथ कई कपड़े दिये। उनमें से अच्छे कपड़े चुनकर गुलबीबी अपने घर ले आयी। उनको पहनकर बुरखा डाल लिया और उसे चाँदी का जो लोटा और सोने के सिक्के मिले थे, वे सब अपने कपड़ों में छिपाकर उसी अमीर के यहाँ गयी जिसके हाथ व्यापारी की पत्नी ने गुलबीबी के पति को सौंपा था। अंधेरा फैल चुका था। गुलबीबी क़द और मोटाई में व्यापारी की पत्नी के बराबर थी और व्यापारी की

पत्नी की पोशाकें पहनी थी, इसलिए उसे संदेह न हुआ और वह अमीर दगा खा गया।

गुलबीबी अपने साथ जो सोने के सिक्के लायी थी, उन्हें अमीर के हाथ देते हुए बोली–"मेरे पति ने इन सोने के सिक्कों को चाँदी के सिक्कों में बदलने के लिए मुझे भेजा है। अमीर ने सोने के सिक्कों को गिनकर देखा, बदले में गुलबीबी को आठ हज़ार चाँदी के सिक्के दिये। सिक्के लेकर गुलबीबी अपनी झोंपड़ी में लौट आयी। दूसरे दिन वह व्यापारी की पत्नी की पोशाकें ले गयी और उसके घर में रखकर बोली कि आगे वह उस घर में काम न कर सकेगी। इसके बाद घर लौट गयी।

उसी दिन अमीर जब व्यापारी से मिला तब व्यापारी ने पूछा–"मैंने सोने के बदले जो चाँदी के सिक्के दिये थे, उसका हिसाब ठीक है न?"

व्यापारी की समझ में बात न आयी और उसने पूछा–"अरे साहब, सोने के सिक्के क्या हैं? और चाँदी के क्या हैं?"

"कल संध्या के समय तुम ने अपनी पत्नी के हाथ जो सोना भेजकर चाँदी के सिक्कों में बदलवा दिया न?" अमीर ने कहा।

व्यापारी को पहले ही अपनी पत्नी पर संदेह था, वह अब पक्का हो गया। वह सोचने लगा कि उसकी आँख बचाकर वह बहुत-सा सोना इकट्ठा कर रही है। गुस्से में जब वह घर लौटा तो देखता क्या है, उसकी पत्नी पड़ोसिन को घर की चीज़ें बेच रही है। क्रोध में अंधे होकर उसने अपनी पत्नी को खूब पीटा और उसे मायके भेज दिया।

गुलबीबी को जो धन मिला था, उससे उसकी सारी तक़लीफ़ें दूर हो गयीं। पति-पत्नी आराम से अपने दिन गुज़ारने लगें।

पद का घमंड

एक गाँव में माधव नामक एक गरीब था। वह झाड़ू तैयार करता, सप्ताह में एक बार शहर में जाकर वहाँ के हाट में उन्हें बेच देता। उससे जो कुछ रुपये मिलते, अपने परिवार का ख़र्च चलाता।

समय बीतता गया। एक दिन नगर का अधिकारी मर गया। उस पद के वास्ते सब लोग आपस में लड़ने-झगड़ने लगे। आख़िर राजा के पास पहुँचकर शिकायत करने लगे कि इस पद के लिए मैं योग्य हूँ। वह अयोग्य है! उनके झगड़ों से तंग आकर राजा ने कोतवाल को बुलवाकर आदेश दिया–"फलाने दिन नगर का दर्वाजा खोलते ही सवेरे जो आदमी पहले नगर में क़दम रखेगा, उसे नगर का अधिकारी नियुक्त करो।"

उस दिन माधव ने पहले पहल नगर में क़दम रखा, इसलिए वह नगर का अधिकारी बन गया। उसे रहने के लिए एक बड़ा महल, सेवा के लिए नौकर-चाकर, घूमने के लिए पालकियाँ, पहनने के लिए क़ीमती पोशाकें दी गयीं। अब वह माधव से माधवराव हो गया।

उस दिन शाम तक माधव की पत्नी अपने पति का इंतज़ार कर रही थी कि वह हाट से घर लौटेगा। आख़िर जब उसे मालूम हुआ कि उसका पति नगर का अधिकारी हो गया है, इस खुशी में वह दौड़ती हुई नगर में आयी तो रास्ते में ही उसे अपने पति से मुलाक़ात हो गयी। वह राजपथ में पालकी पर जा रहा था। उसकी पत्नी ने पालकी रुकवाकर पूछा–"तुम मेरे माधव हो न?"

"यह तो सच है, लेकिन तुम यह न कहो कि मुझे जानती हो! क्योंकि अभी तक मैं समझ नहीं पाया हूँ कि मैं कौन हूँ?" माधव ने अपनी पत्नी से कहा।

सेवा-धर्म

एक गाँव में एक बड़ा धनी था। उनके पास नौकरी करने दूर दूर से लोग आते, लेकिन वे उनको खुश नहीं कर पाते थे। अमीर को लगता था कि उनमें सेवा की भावना नहीं है। इसलिए वे उन नौकरों को बहुत समय तक अपने पास रख नहीं पाते थे।

एक बार उनके पास काम करने दो आदमी आये। अमीर ने उनकी परीक्षा लेनी चाही। दोनों को एक झाबा देकर कहा—"तुम दोनों बगीचे के कुएँ के पास जाओ और झाबे-भर कर पानी ले आओ। शाम तक काम करने पर तुम दोनों को एक-एक रुपया मज़दूरी दूँगा।"

दोनों ने आश्चर्य में आकर एक दूसरे का चेहरा देखा, फिर विवश होकर कुएँ के पास चले गये। रास्ते में बड़े ने छोटे से कहा—"लगता है कि मालिक का दिमाग़ ख़राब है। कहीं झाबे में पानी ठहर सकता है?"

छोटे ने जवाब दिया—"क्या इतनी छोटी-सी बात वे नहीं जानते?"

दोनों ने कुएँ से पानी खींच-खींचकर झाबे में डाल दिया। झाबे से सारा पानी निकल गया। छोटा आदमी बाल्टी भर-भर कर झाबे में पानी डालता रहा, बड़े ने भी दो-तीन बार बाल्टियाँ-भर कर झाबे में डाल दिया। लेकिन बार-बार झाबे से पानी के बह जाते देख वह खीझ उठा।

"अरे, झाबे में एक बूंद पानी भी नहीं ठहरता, मैं क्यों नाहक़ अपने शरीर को थका दूँ? मालिक की तरह तुम्हारा दिमाग़ भी ख़राब हो गया हो तो शाम तक अपने हाथ-पाँव थका दो। मुझसे यह काम नहीं बनता।" यह कहते बड़ा आदमी एक पेड़ की छाया में बैठ गया।

शिवेन्द्र नारायण

छोटा आदमी शाम तक पानी खींचकर झाबे में डालता रहा। शाम तक कुएँ का पानी खतम हो गया और बाल्टी में कीचड़ आने लगा।

सूरज डूब गया। छोटे ने बाल्टी रखकर झाबा उठाया। उसमें कोई चीज़ चमक रही थी। निकाल कर देखा तो वह सोने की अंगूठी थी। छोटा आदमी उत्साह के साथ अंगूठी लेकर मालिक के पास दौड़ा-दौड़ा पहुँचा। बड़े ने भी उनका साथ दिया।

मालिक ने छोटे के हाथ से अंगूठी लेकर कहा—"इस अंगूठी के वास्ते ही मैंने तुम लोगों से कुएँ से पानी निकलवाया। लो, तुम्हारी मज़दूरी।" यह कहतें मालिक ने छोटे के हाथ एक रुपया दिया और बड़े से कहा—"मैंने सोचा कि तुम भी काम करने आये हो? दो-तीन बाल्टी पानी खींचकर बंद किया। तुमको मज़दूरी पाने की इच्छा नहीं है।"

"आपने झाबा भरने को कहा। कई बाल्टियाँ पानी डालने पर भी झाबा भरता न था। इसलिए कोई फ़ायदा न देख मैं ने छोड़ दिया।" बड़े ने पागल-सा मुंह बनाकर उत्तर दिया।

"तुमने यह क्यों सोचा कि मैंने झाबा भरने के लिए पानी निकालने को कहा? मैंने जो काम बताया, उसे पूरा करके मज़दूरी ले जाना तुम्हारा कर्त्तव्य था। उसका जो फल होगा, वह मेरा था। उसके बारे में मुझे चिंता करनी थी, तुमको इसकी फ़िक्र किसलिए! तुम में सेवा का धर्म नहीं है। तुम काम करने योग्य नहीं हो।" यह कहकर मालिक ने उसे थोड़े से पैसे दिये और उसे घर भेजकर छोटे को काम पर रख लिया। उसने बहुत समय तक ईमानदारी से काम किया और मालिक उसके काम से खुश हो गया। इस तरह वह जल्द ही अमीर बन गया।

द्रौपदी, श्रीकृष्ण की पत्नियाँ तथा अन्य नारियाँ एक जगह आपस में वार्तालाप कर रही थीं तो दूसरी ओर सभी पुरुष एक जगह बैठे परस्पर वार्तालाप कर रहे थे। उस वक़्त कई मुनि कृष्ण और बलराम को देखने आये। तब पांडवों तथा बाक़ी राजाओं ने उठ खड़े होकर मुनियों को आदरपूर्वक नमस्कार किया। सबके साथ कृष्ण और बलराम ने भी उनकी पूजा की।

मुनियों ने कृष्ण का यशोगान करते हुए कहा—"आप मानव रूपधारी आदिदेव हैं। हम भले ही तत्ववेत्ता क्यों न हों, फिर भी आपकी माया के वशीभूत हैं।"

वसुदेव ने मुनियों की सलाह पर यज्ञ करके देवताओं का ऋण चुकाने का संकल्प किया। यादवों ने यज्ञ के लिए आवश्यक सारी सामग्री का संचयन किया। वसुदेव तथा उनकी अट्ठारह पत्नियों ने स्नान करके, नये वस्त्र और आभूषण पहने, तब यज्ञ-दीक्षा ली। मुनियों की मदद से प्रकृति-यज्ञ तथा विकृति-यज्ञ संपन्न किया, सभी यज्ञों में यज्ञ-पुरुष की आराधना कर ऋत्विकों को गायें, ज़मीन और कन्याओं को भी दक्षिणा के रूप में देकर उनको तृप्त किया। यज्ञों के समाप्त होने पर अवभृत स्नान करके वसुदेव ने अपने सेवकों को वस्त्र और आभूषण दिये तथा बंधुजनों को बढ़िया भोज दिये।

३०. कृष्ण का निर्वाण

एक दिन देवकीदेवी के मन में एक विचार आया कि उनके पुत्र कृष्ण और बलराम साधारण व्यक्ति नहीं, बल्कि शक्तिशाली हैं। वे अपने गुरु के लिए गुरु-दक्षिणा के रूप में उनके मृत पुत्र को ला दिये। ऐसी हालत में कंस ने उनके जिन पुत्रों को क्रमशः मार डाला, क्या उनको वे दिखा न सकेंगे?

यही बात देवकी ने बलराम और कृष्ण के सामने प्रकट की। उन दो भाइयों ने माँ की इच्छा की पूर्ति करने का वचन दिया और योगमाया का रूप धारणकर वे सुतला में गये। वहाँ पर बलि चक्रवर्ती ने उनका अपूर्व स्वागत किया और उचित आदर-सत्कार के बाद उनके आगमन का कारण पूछा।

इस पर बलि से कृष्ण ने यों निवेदन किया–"महराज! प्राचीनकाल में स्वयंभू के मन्वतर के समय मरीची के छे पुत्र ब्रह्मा को सरस्वती पर मोहित होते देख अचानक हँस पड़े। तब ब्रह्मा ने कुपित होकर उनको राक्षसों के रूप में जन्म लेने का शाप दिया। तब स्मर, उद्गीथ, परिष्वंग, पतंग, क्षुद्रभू और घृणी नामक वे छे व्यक्ति पहले हिरण्यकश्यप के पुत्रों के रूप में पैदा हुए और बाद को मेरी माता देवकी के गर्भ से जन्म धारणकर कंस द्वारा मारे गये। वे इस वक़्त आपके राज्य में हैं। उनको अगर आप मेरे साथ भेज देंगे तो मैं उन्हें अपनी माता को दिखाकर उनके संताप को दूर करूँगा। इसके बाद मैं उन्हें उत्तम लोक प्रदान करूँगा।"

बलि ने कृष्ण की इच्छा के अनुसार उन छठों को कृष्ण के साथ भेज दिया। अपने खोये हुए उन पुत्रों को देख देवकी बहुत प्रसन्न हुयीं और कृष्ण की इस अद्भुत शक्ति पर आश्चर्य चकित हो गयीं।

उन्होंने अपने पुत्रों के साथ आलिंगन कर उन्हें अपना दूध पिलाया। इसके बाद वे छठों व्यक्ति कृष्ण के अनुग्रह से ऊर्ध्व लोकों में चले गये।

समय बीतता गया। महाभारत के युद्ध में कौरव और पांडवों के दलों में असंख्य लोगों की आहुति हुई। युद्ध में विजयी युधिष्ठिर को सिंहासन पर बिठाकर कृष्ण द्वारका में लौट आये।

एक दिन कृष्ण को देखने के लिए विश्वामित्र, असित, कण्व, दूर्वास, भृगु, अंगीरस, कश्यप, वासुदेव, अत्रि, वसिष्ठ, नारद इत्यादि मुनि आये। तब कुछ यादवकुमारों ने सांबु को गर्भवती का वेष धरवाकर मुनियों के प्रति विनय प्रदर्शित करते उनसे पूछा– "यह औरत यह पूछने में लजाती है कि उसके पुत्र होगा या पुत्री होगी। इसलिए हम लोग उसकी ओर से आप लोगों से पूछते हैं। आप लोग सब कुछ जानते हैं। इसलिए यह बताने की कृपा कीजिये।"

यादवकुमारों की धृष्टता पर मुनियों को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने शाप दिया–" मूर्खों, इसके गर्भ से अपने वंश का नाश करनेवाला मूसल पैदा होगा।"

यादवकुमार डरकर भाग गये और सांबु के कपड़े उतारकर देखा तो उसके पेट में से एक लोहे का मूसल बाहर आते दिखायी दिया। उन्होंने उसे बाहर निकाला और पश्चात्ताप करना शुरू किया–"हमने कैसा अपराध किया है! यह बात मालूम होने पर यादव सब क्या कहेंगे?" फिर डर के मारे कांपते सबने उग्रसेन के पास जाकर सारी बातें कह सुनायीं।

मूसल और मुनियों के शाप का समाचार सब यादवों को मालूम हो गया। वे चकित हुए और डर भी गये। उग्रसेन ने यादवों को आदेश दिया कि उस मूसल को पत्थर पर घिसकर उसके चूर्ण को समुद्र में मिला दे। यादवों ने वैसा ही किया। वह चूर्ण लहरों के थपेड़े खाकर समुद्र के किनारे बह आया और वहां दूब के रूप में उग आया। मूसल को घिसाने से अंत में जो छोटा टुकड़ा बच रहा, उसे एक मछली ने निगल डाला। वह मछली एक मछुए के जाल में फँस गयी। उस मछुए ने मछली के पेट से लोहे का टुकड़ा निकालकर उसे एक शिकारी के हाथ इसलिए दिया कि वह उसे अपने बाण के कांटे के रूप में इस्तेमाल करे।

इस तरह यादव-वंश के विनाश का उचित इंतज़ाम हो गया।

इसके कुछ समय बाद द्वारका नगर में कई उत्पात दिखायी दिये। तब कृष्ण ने समस्त यादवों को सुधर्म सभाभवन में बुला भेजा और उनसे यों कहा–

"द्वारका में भयानक उत्पात हो रहे हैं। वे सब अपशकुन सूचित करते हैं। आप लोग जानते हैं कि मुनियों ने यादव वंश के विनाश का शाप दिया है। इसलिए एक क्षण भी द्वारका में रहना हम लोगों के लिए उचित नहीं है। नारियों, बच्चों और बूढ़ों

को हम शंख द्वार में भेज देते हैं। बचे हुए हम सब सरस्वती नदी के किनारे पर स्थित प्रभास तीर्थ में जायेंगे। वहाँ पर स्नान और उपवास करके देवताओं की पूजा करेंगे; और ब्राह्मणों को गाय, सोना, वस्त्र, हाथी, घोड़े और गृहों का दान करेंगे। उनसे शांति के कर्मकाण्ड करायेंगे। देवताओं, ब्राह्मणों और गायों की पूजा करने से सभी अरिष्ट दूर होंगे तथा हमारा शुभ होगा।"

यादव वंश के सभी प्रमुख व्यक्तियों ने कृष्ण की बातों का समर्थन किया। नारियों, बच्चों और बूढ़ों को भेजकर शेष सभी यादव जहाज़ों में समुद्र पार करके प्रभास तीर्थ में पहुँचे। लेकिन वहाँ पर उनको देव-माया ने घेर ली। सब ताड़ी पीकर उस नशे में लड़ने व झगड़ने लगे। वह झगड़ा धीरे धीरे युद्ध का रूप धारण करने लगा। उस युद्ध में हाथी और घोड़े मर गये। रथ सब टूट गये। फिर यादव-प्रमुखों के बीच द्वन्द्व युद्ध शुरू हुए। प्रद्युम्न और सांबु लड़ने लगे। इसी भांति अक्रूर का भोज के साथ, अनिरुद्ध का सात्यकी के साथ, सभद्र संग्रामजित से, सुचारु का गदा के साथ और सुमित्र का

सुरथ से युद्ध होने लगा। बाक़ी लोग भी आपस में लड़ने लगे। उनके बीच बंधु और मित्र का भाव जाता रहा। पागलों की भांति आपस में एक दूसरे का वध करने लगे।

थोड़ी देर बाद सब के बाण खतम हो गये। धनुष टूट गये। उनके हाथ कोई हथियार बच न रहा। समुद्र के किनारे दूब दिखाई दी। उसे उखाड़कर उससे परस्पर लड़ने लगे। कृष्ण ने उनको रोकना चाहा। पर वे सब नाराज़ हो बलराम और कृष्ण पर भी टूट पड़े। इस पर कृष्ण नाराज़ हो उठे और हरी दूब

उसे कोई जानवर समझा और उस पर निशाना लगाकर अपना बाण छोड़ दिया। उस बाण की नोक यादवों द्वारा घिसाये गये मूसल का लोहे का टुकड़ा था!

बाण छोड़कर शिकारी दौड़ता आया और वहाँ पर मनुष्य को देख पछताते हुए कृष्ण से बोला—"महाशय, मुझ से भूल हो गयी है। क्षमा कीजिये।"

कृष्ण जर को देख बोले—"चिंता न करो, मैं जो चाहता था, वही हुआ।" इसके बाद उसे प्रसन्नतापूर्वक भेज दिया।

इस बीच कृष्ण को ढूंढते दारुक रथ पर वहाँ आ पहुँचा और कृष्ण को देख रथ से उतरकर उनके पास आया। तब कृष्ण दारुक से बोले—"तुम द्वारका में जाकर सब से कह दो कि हमारे वंश के सब लोग मर गये हैं। बलराम भी नहीं रहें और मैं इस हालत में हूँ। तुम में से कोई भी अब द्वारका में पल-भर भी न रहो। मेरी मृत्यु के बाद समुद्र द्वारका को डुबो देगा। मेरे माता-पिता और बाक़ी लोग इंद्रप्रस्थ में जाकर अर्जुन के आश्रय में हैं। तुम इन सब की चिंता किये विना निलिप्त भाव से ज्ञाननिष्ठा में अपना शेष जीवन विताओ।"

उखाड़कर उससे यादवों को मारने लगे। इस तरह मुनियों का शाप दावानल की भांति फैलकर यादव वंश का निर्मूल करने लगा।

सभी यादव मर गये। कृष्ण ने चारों तरफ़ देखकर मन में कहा—"पृथ्वी का भार घट गया है।"

बलराम ने समुद्र के तट पर योग-समाधि में बैठकर प्राण त्याग दिये। उस दृश्य को देख कृष्ण निर्विकार भाव से एक पीपल वृक्ष पर अपनी दायीं जांव पर बायाँ पैर रखकर बैठ गये। जर नामक एक शिकारी ने उनके लाल तलुए को देख

SANKAR

दारुक ने कृष्ण की प्रदक्षिणा की और दुखी हृदय को लेकर द्वारका की ओर चल पड़ा। वहाँ पहुँचकर उसने उग्रसेन और वसुदेव के चरणों पर गिरकर रोते हुए यादवों की मृत्यु का समाचार सुनाया। सब रोते-कलपते यादवों की मृत्यु के स्थान पर पहुँचे। वसुदेव, देवकी और रोहिणी ने अपने पुत्र बलराम और कृष्ण की सर्वत्र बड़ी खोज की। लेकिन उनके शरीर उन्हें दिखायी न दिये। तब अपार दुख से उनके कलेजे फटने के कारण वे तीनों वहीं पर मर गये।

यादवों की पत्नियों ने अपने-अपने पतियों के साथ सहगमन किया। बलराम की पत्नियाँ बलराम की चिता पर भस्म हो गयीं। वसुदेव और कृष्ण की पत्नियों ने भी वैसा ही किया।

अर्जुन ने वहाँ पर पहुँचकर अपने मृत रिश्तेदारों की अत्येष्ठियाँ करायीं। उसी समय द्वारका नगर समुद्र में डूब गया। नगर का मंदिर मात्र पानी पर तैरता दीख रहा था।

अर्जुन बचे हुए स्त्री, वृद्ध और बालकों को साथ लेकर इंद्रप्रस्थ लौटा और वज्र का पट्टाभिषेक कराया। इसके बाद सभी पांडव द्रौपदी को साथ लेकर महाप्रस्थान पर चले गये।

कृष्ण के निर्वाण के समय वहाँ पर ब्रह्मा, इंद्र तथा अन्य देवता, प्रजापति, सिद्ध, विद्याधर, और अप्सराएँ भी आ पहुँचीं। सारा आसमान उनके विमानों से भर गया। विमानों से फूलों की वर्षा हुई। कृष्ण ने विष्णु का दिव्य रूप धारण किया और सब की तरफ़ एक बार दृष्टि प्रसारित की। इसके बाद सत्य, धर्म, धृति, श्री और कीर्ति के साथ वैकुण्ठ की ओर निकले। (समाप्त)

अरण्य पुराण

[३३]

मौवली उस दिन की रात को तथा दूसरे दिन-भर सोकर संध्या तक जाग पड़ा। नींद से जागते ही उसका हाथ कटार पर गया। झट उठकर खड़ा हो गया और युद्ध के लिए सन्नद्ध हो गया।

उसके भीतर कोई हलचल मच रही थी। वह खूब दौड़ना चाहता था। लेकिन छोटा-सा लड़का मौवली की गोद से उतरता न था। मेस्सुआ बेमतलब के गीत गाते, मौवली के बाल संवार रही थी। तब बाहर से बड़े भाई की कराहट सुनायी दी। मौवली ने जानवरों की बोली में कहा—"जब मैंने तुमको बुलाया, तब तुम नहीं आये!"

"तुम अपने सब दोस्तों को यहाँ पर इकट्ठा न करो, तुम्हारा भला होगा।" मेस्सुआ ने मौबली से कहा।

"तुम्हें कोई डर नहीं है। उस दिन जब तुम लोग कान्हिवारा जा रहे थे, मेरे कई मित्रों ने तुम लोगों का छिपकर अनुसरण किया और तुम्हारी रक्षा की। माँ अब मुझे जाना है।" मौवली ने कहा।

मौवली दर्वाज़ा खोलकर जाने लगा तो मेस्सुआ ने उसके कंठ पर हाथ डालकर कहा—"बेटा, फिर लौटकर आओ! मैं नहीं जानती कि तुम मेरे बेटे हो या नहीं, लेकिन तुम मेरे प्राणों के समान हो! देखो, बच्चे ने भी रोनी सूरत बनायी।" यह कहते मौवली का ध्यान छोटे बच्चे की ओर आकृष्ट किया। मौवली को लगा कि उसके कंठ में कोई चीज़ अटक गयी है। वह बोला—"ज़रूर लौट आऊँगा!" मौवली ने बाहर आकर अपने बड़े

वह युवती इस तरह चिल्ला उठी, मानों किसी भूत को देख लिया हो। फिर एक गहरी साँस लेकर आगे बढ़ गयी। मौवली पौधों की आड़ में से मुंह निकालकर उस ओर तब तक देखता रहा, जब तक वह आँखों से ओझल न हुई।

इसके बाद वह अपने बड़े भाई की ओर घूमकर बोला—"मैं मानवों की भीड़ में जाऊँगा तो तुम लोग क्या मेरे पीछे न चलोगे?" "क्या इसके पहले न आये जो अब आवे?" बड़े भाई ने कहा।

बड़ा भाई थोड़ी देर मौन रहा, फिर बोला—"बाघीर का कहना सत्य है! मानव आखिर मानवों से ही जा मिलता है! माँ भी यही कहा करती थी।" "अकेला ने भी यही बताया।" मौवली गुनगुनाने लगा।

"महा ज्ञानी काबा ने भी यही बात कही।" बड़े भाई ने कहा। "तुम क्या कहते हो, भैया?" मौवली ने पूछा।

"उन लोगों ने तुमको एक बार भगा दिया। तुम्हारे मुंह पर उन लोगों ने पत्थर फेंका। तुमको मारने के लिए बलदेव को भेजा। तुमको लाल फूलों में ढकेलने की सोची। उनको तुमने गालियाँ दीं।" बड़े भाई ने कहा।

भाई से पूछा—"जब मैंने बुलाया तब तुम चारों क्यों नहीं आये?"

"कल रात ही तो नये गीते गाये हमने, क्या भूल गये?" बड़े भाई ने कहा।

"हाँ, हाँ!" मौवली ने उत्तर दिया।

"तुमने कौन-सा काम किया! मानवों की भीड़ में मिलकर खूब खाया-पिया और सो गये?" बड़े भाई ने पूछा।

मौवली कुछ कहने जा रहा था कि सफ़ेद पोशाक पहने उस रास्ते से एक लड़की को जाते देखा। बड़ा भाई झट छिप गया। मौवली खेत में ऊँचाई तक फैले पौधों के बीच चला गया।

"तुमने तो अपना विचार नहीं सुनाया।" मौवली ने पूछा। वे दोनों दौड़ रहे थे।

"हम चारों तुम्हारे ही आदमी हैं। तुम जैसा चाहोगे, वैसे हम भी चलेंगे। हम सब एक ही माँ के बेटे हैं। लेकिन अरण्य को क्या जवाब दोगे?"

"तुमने अच्छा किया कि याद दिलाया। तुम जाकर पहले सबको पहाड़ पर इकट्ठा करो। मैं अपने दिल की बात उन लोगों से कह दूँगा।" मौवली ने कहा।

दूसरा समय होता तो सबको एक ही पुकार द्वारा इकट्ठा करते। लेकिन नये गीतों का समय अभी पूरा नहीं हुआ था।

"अरण्य का अधिपति मानवों के बीच जा रहा है। सब लोग पहाड़ पर आ जाइये।" बड़ा भाई पुकार उठा।

मौवली पैर घसीटते जब बैठक की जगह पहुँचा, तब उसने देखा कि वहाँ पर केवल चार बड़े भाई ही थे। उनके अलावा अंधा भालू और कावा भी थे।

"तुम्हारा शक समाप्त हो गया, मानव के बच्चे! थोड़े आँसू गिराओ न?" कावा ने कहा। मौवली पीड़ा से कराहते हुए बोला—"मैं उन शुनकों के हाथ में भी नहीं मरा। मेरी सारी ताक़त जाती रही है! लेटता हूँ तो नींद नहीं आती। नहाता हूँ तो ताप बना रहता है। मेरी सारी हड्डियाँ गूदे की तरह हो गयी हैं।"

"अरे इतनी सारी बातें क्यों करते हो? उस दिन अकेला ने कहा था—मौवली को मानवों की भीड़ में भेज दो। मैंने भी कहा था। इस बूढ़े की बात सुननेवाला ही कौन है। बाघीर ने भी...बाघीर कहाँ पर है?" भालू ने कहा।

"मैं कभी का जानता था कि अरण्य भले ही मना करे, मानव मानवों की भीड़ में जायगा आखिर!" कावा ने कहा।

चारों भाइयों ने घबराकर एक दूसरे की ओर देखा। फिर मौवली की ओर दृष्टि प्रसारित की।

भालू ने मौवली से कहा–"चाहें मैं आँखों से भले ही न देखता हूँ, परंतु मेरी बुद्धि को साफ़ सब कुछ नज़र आती है। मौवली, तुम अपना रास्ता ढूंढो। मानवों की भीड़ में अपनी जगह बनाओ, लेकिन जब भी तुम बुलाओगे, अरण्य तुम्हारी बात सुनने को तैयार रहेगा! तुम्हारे आदेशों का हाथ बांधकर पालन करेगा!"

"मैं स्वयं जाना नहीं चाहता, किंतु मेरे पैर उधर खिच रहे हैं!" मौवली ने कहा।

"छत्ते में शहद समाप्त हो गया है, छोड़कर जाना ही पड़ेगा!" भालू ने कहा।

"एक बार जो केंचुली छोड़ी जाती है, उसमें फिर प्रवेश करना ना मुमक़िन है।" कावा ने कहा।

"लेकिन बाघीर का क्या विचार है? बैल देकर मुझे खरीदा है...?"

मौवली की बात पूरी न हो पायी थी कि झाड़ियों को ढकेलते बाघीर आ पहुँचा। खून से लतपथ पंजा उठाकर दिखाते हुए बोला–"इसलिए मेरे आने में देरी हुई, मैंने दो साल की उम्रवाले बैल को मार डाला। सब ऋण चुक जायेंगे। शिकार होना है, भैया! यह न भूल जाओ कि बाघीर तुम से मुहब्बत करता है! भालू का विचार ही मेरा भी विचार है!"

भालू ने मौवली से गले लगाया। भालू के कंधे पर सर रखकर मौवली रोने लगा।

"केंचुली को छोड़ना कितना मुश्किल है!" कावा बोला।

बड़े भाई ने सर उठाकर बाक़ी भेड़ियोंवाले छोटे भाइयों से कहा–"तारे सब छुप रहे हैं। अब हमें अपना मार्ग ढूंढना होगा!" (समाप्त)

८७. प्राचीन पनामा नगर के अवशेष

प्राचीन पनामा नगर का निर्माण ई. सन १५१९ में हुआ था। लगभग ३०० वर्ष पूर्व स्पानिश नगर लुटवाकर ध्वस्त किया गया। आज केवल संत अनास्टियस केथड्रल की पत्थर की दीवारें बची हुई हैं। नवीन पनामा नगर का निर्माण इन अवशेषों के छे मील पश्चिम में हुआ है।

Photo by R. A. Jamsandekar
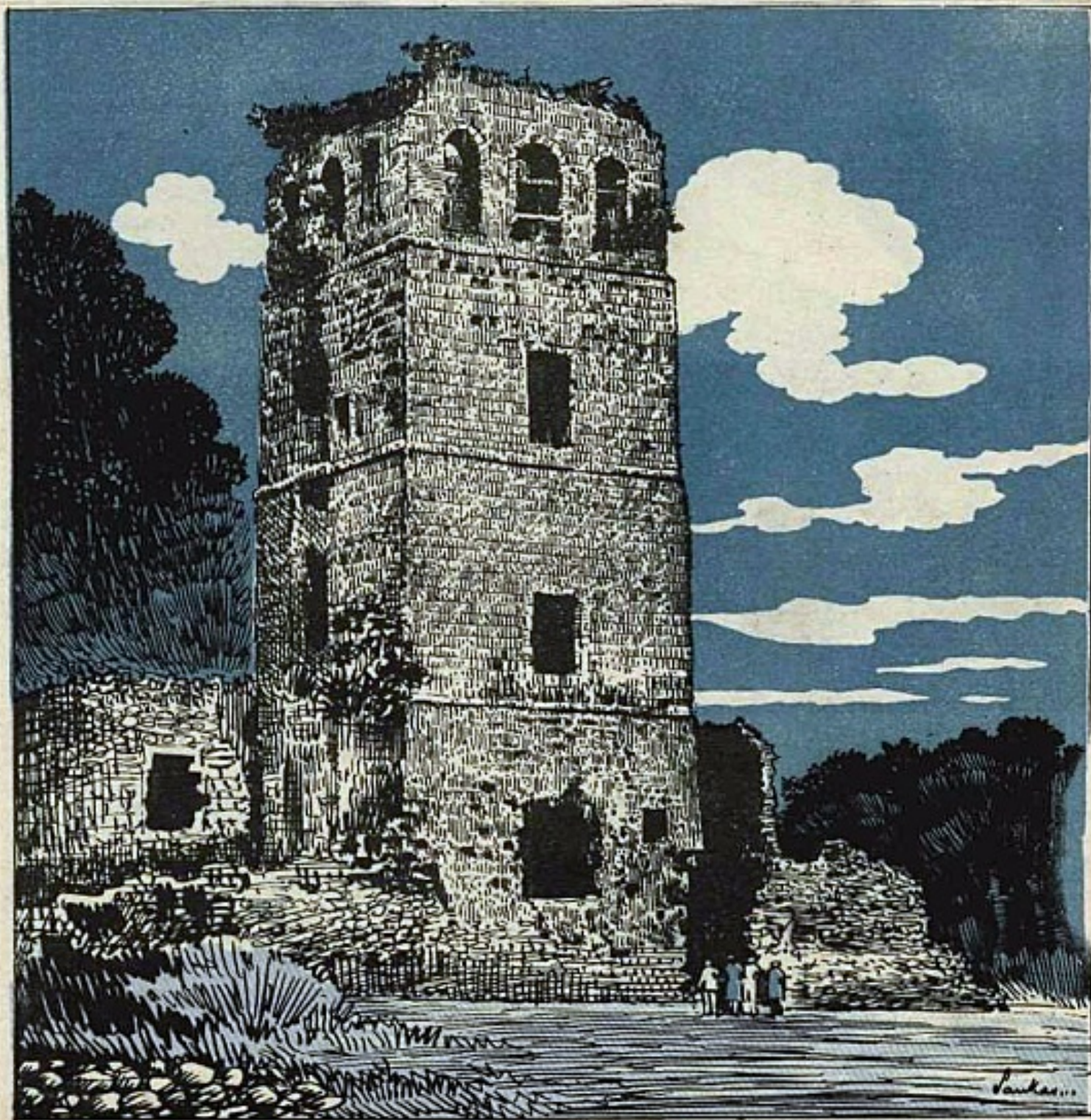
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'आओ, पक्षी से बात करें।'

प्रेषिका :
ब्रजलता शर्मा - इटावा

Photo by Prabhakar Mahadik

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'भोले पशु से प्यार करें।'

प्रेषिका :
ब्रजलता शर्मा - इटावा

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

मई १९६९ :: पारितोषिक २०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें!

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख १० मार्च १९६९ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

मार्च – प्रतियोगिता – फल

मार्च के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनकी प्रेषिका को २० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **आओ, पक्षी से बात करें!**
दूसरा फ़ोटो: **भोले पशु से प्यार करें!**

प्रेषिका: **कुमारी व्रजलता शर्मा,**
विद्यार्थिनी, हायर सेकण्डरी स्कूल, पो. इटावा, कोटा ज़िला (राजस्थान)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

दुखी राजकुमारी

सूर्य राजा के राज्य में
किसी के मन में
सुख नहीं··· फूलों-सी
सुन्दर राजकुमारी की
मधुर हँसी न जाने
कहाँ चली गई।

राजा की परेशानी का कोई ठिकाना नहीं।
अपने मंत्रियों की सलाह लेते पर सब बेकार...

कितने ही दामी उपहार लाकर दिये, लेकिन
राजकुमारी के चेहरे पर हँसी नहीं आई...

...अब राज्य में मानो दुख की छाया उतर आई हो

एक दिन, एक सुंदर राजकुमार घोड़े पर सवार उधर से आ रहा
था तो उसकी आँखें अचानक दुखी राजकुमारी पर पड़ी।

BB 4751